शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 14 अंक : 3 1 अक्टूबर 2021

आश्विन, विक्रम संवत् 2078

संस्थापक
स्व. मुकुन्दराव कुलकर्णी

❖

परामर्श
के.नरहरि
डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल
जगदीश प्रसाद सिंघल
शिवानन्द सिन्दनकेरा

❖

सम्पादक
डॉ. राजेन्द्र शर्मा

❖

सह सम्पादक
भरत शर्मा

❖

संपादक मंडल
प्रो. नन्द किशोर पाण्डेय
डॉ. एस.पी. सिंह
डॉ. ओमप्रकाश पारीक
डॉ. शिवशरण कौशिक

❖

प्रबन्ध सम्पादक
महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक
बजरंग प्रसाद मजेजी

❖

प्रेषण प्रभारी : **नौरंग सहाय**

कार्यालय प्रभारी :
आलोक चतुर्वेदी : 8619926481

प्रकाशकीय कार्यालय
82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,
जयपुर (राजस्थान) 302001
दूरभाष : 9414040403

दिल्ली ब्यूरो :
शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,
कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053
दूरभाष : 011-22914799

E-mail :
shaikshikmanthan@gmail.com
Visit us at :
www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति ₹ 25/– वार्षिक शुल्क ₹ 250/–
आजीवन (दस वर्ष) ₹ 2000/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है तथा चित्रों का प्रतीकात्मक प्रयोग किया गया है।

अध्यापक शिक्षा से अपेक्षाएँ

❑ **प्रो. सुदेश कुमार शर्मा**

अध्यापक शिक्षा की गतिशील अवधारणात्मक सहमति के बावजूद अध्यापक शिक्षा की अधिकांश प्रणालियाँ व प्रतिमान स्थायी अवधारणाओं के अनुसार संगठित किये गये हैं। अध्यापक शिक्षा सुधार मुख्यतः प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा तक ही केन्द्रित रहे हैं। अध्यापक शिक्षा को सचमुच एक मुक्त व गतिशील प्रणाली निर्मित करने में कई समस्याएँ हैं, जिनमें कभी कभी अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवसाय के पुराने सम्प्रत्ययों का धराशायी होना भी समाविष्ट है। ऐसी स्थिति में अध्यापक शिक्षा के सुधार पर परिष्कार हेतु तत्सम्बन्धी मुख्य विषयों का विवचेन कर सम्भावित विकल्पों पर चर्चा परमावश्यक है।

14

अनुक्रम

3.	सम्पादकीय	– डॉ. राजेन्द्र शर्मा
4.	शिक्षक शिक्षा की अवधारणा व लक्ष्य	– डॉ. यदु शर्मा
6.	शिक्षक शिक्षा में प्रवेश प्रक्रिया	– डॉ. सुमन बाला
11.	शिक्षक शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ...	– डॉ. शान्तेष कुमार सिंह
19.	शिक्षा नीति के परिपेक्ष्य में शिक्षक शिक्षा	– डॉ. मनीष कुमार
21.	शिक्षक शिक्षा के समक्ष वर्तमान समस्याएँ	– श्रीमती भारती दशोरा
23.	शिक्षक शिक्षा और शिक्षक की भूमिका	– डॉ. राजीव कुमार सिंह
25.	शिक्षक शिक्षा की वर्तमान स्थिति – अपेक्षित परिवर्तन	– डॉ. बबीता सोलंकी
27.	अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार की चुनौतियाँ...	– डॉ. मीनू अग्रवाल
34.	Challenges to Teacher Education in	– Rakesh Singh
36.	The Teacher is the backbone of the society	– Dr. Mukhtyar Singh
38.	Integrated Teacher Education Programme...	– Prof. R. G. Kothari
40.	भारतीय संस्कृति में प्रश्नों की परम्परा	– डॉ. ईश्वर परिड़ा

Regional Institutes of Education : An Overview of Six Decades of Excellence

❑ **Prof. P. C. Agarwal**

Quality has many parameters. RIEs reflect it in all its endeavours. Apart from smooth conduction of the courses mentioned above, regular revision of syllabus as per NCTE Regulations is also undertaken. RIEs are working as nodal centres in the region for the furtherance of policies and programmes in the region. Faculty contributes to all NCERT programmes and activities such as curricular studies, reforms and developments, textual material development, exemplar problem books, lab manuals, supplementary material development, development of learning outcomes, assessment tools, techniques, alternative academic calendar and PRAGYATA guidelines during the COVID-19 pandemic.

29

संपादकीय

डॉ. राजेन्द्र शर्मा
सम्पादक

सितम्बर के पूरे महीने में ही शिक्षा एवं टीकाकरण की खूब चर्चा रही है। देश के लगभग 26 करोड़ बच्चे 17 माह स्कूली कक्षाओं से दूर रहने के बाद सितम्बर से स्कूल जाने लगे हैं। पहले बड़ी कक्षाओं के छात्र-छात्राओं को बुलाया गया और उसके बाद प्राथमिक कक्षाओं के बच्चों को। यह देखना सुखद रहा कि विद्यालयों में विद्यार्थियों के आगमन को उत्सव की तरह मनाया गया है। वस्तुतः माता-पिता और बच्चे बेसब्री से पाठशाला प्रारम्भ होने की प्रतीक्षा कर रहे थे। पर नियमित रूप से स्कूल जाने, पूरे दिन वहाँ रुकने और पढ़ने की आदत बनने में थोड़ा वक्त तो लगेगा ही। इसलिए आने वाले दिनों में बच्चों को स्कूल जाने के लिए प्रेरित करना होगा, उनकी कक्षाओं में उपस्थिति पर पूरा ध्यान देना होगा तथा स्कूल नहीं आने वाले बच्चों के अभिभावकों से सतत सम्पर्क करना होगा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में स्कूल जाने में असमर्थ बच्चों के घरों तक स्कूल पहुँचाने की थोड़ी पहल की गयी है तथापि इस दिशा में अभी बहुत कुछ करने की आवश्यकता है।

कोविड की वजह से जब मार्च 2020 में अचानक विद्यालय बंद हुए, तभी से 'लॉस ऑफ लर्निंग' पर काफी विचार-विमर्श हो रहा है। बच्चों का बहुत नुकसान हुआ है, यह बात सबके मन में है। यानी स्कूल गए बिना वे अगली कक्षा में प्रोन्नत तो हो गए; परन्तु उनमें प्रोन्नत कक्षा के स्तर के अनुरूप समझ नहीं बन पायी है। इस दौरान हुए विभिन्न अध्ययनों से भी यह स्पष्ट हुआ है कि ऑनलाइन शिक्षण पद्धति कक्षा शिक्षण का विकल्प नहीं हो सकती है। ऐसे में अब जब स्कूल प्रारम्भ हो गए हैं, शिक्षक शिक्षार्थी वापस मिल रहे हैं तो हमारा पहला काम होना चाहिए - बच्चों की पुरानी कमजोरियों को दूर करना। उन्हें वह सब सिखाने का प्रयास होना चाहिए जो वे पिछले महीनों में भूल गए हैं और नहीं सीख सके हैं। केवल पाठ्यक्रम (सिलेबस) थोड़ा कम करने से काम नहीं बनेगा। और जिन बच्चों ने प्राथमिक कक्षाओं में अभी प्रवेश लिया है, उन्हें तो शिक्षक के व्यक्तिगत मार्गदर्शन की कहीं अधिक जरूरत है। शिक्षक उनकी रुचियों, रुझान, विशिष्टताओं एवं क्षमताओं को अच्छी तरह से समझें एवं उनकी बुनियाद मजबूत करने पर ध्यान केन्द्रित करें। नींव मजबूत होगी तभी भवन भव्य बनेगा।

इसी सितम्बर माह में सर्वोच्च न्यायालय ने देश की बेटियों के लिए एनडीए के मार्फत सेना में जाने का रास्ता खोला है। यद्यपि शासन ने पाठ्यक्रम एवं बुनियादी ढाँचे में बदलाव की जरूरत बताते हुए छात्राओं को 2022 से राष्ट्रीय रक्षा अकादमी (एनडीए) परीक्षा में शामिल करने का तर्क दिया था; परन्तु शीर्ष अदालत ने उक्त प्रस्ताव से सहमति नहीं जताते हुए 14 नवम्बर 2021 को होने वाली प्रवेश परीक्षा में महिलाओं को शामिल करने का आदेश दिया। उल्लेखनीय है कि अब तक एनडीए की प्रवेश परीक्षा के लिए छात्र ही पात्र थे और छात्राएँ ग्रेजुएशन के बाद ही मिलिट्री सर्विसेज में आ सकती थी। माननीय न्यायालय के निर्णय से छात्राएँ 12वीं के बाद सेना में सीधे अफसर रैंक तक पहुँच सकेंगी।

अब चर्चा टीकाकरण की। शुक्रवार 17 सितम्बर को टीकाकरण के क्षेत्र में भारत ने एक दिन में दो करोड़ से अधिक लोगों को टीका लगाकर एक नया इतिहास रच दिया। यह बेमिसाल रफ्तार दुनिया को बता रही है कि भारत कितना करने में समर्थ है तथा आने वाले समय में और कितना बेहतर कर सकता है। दुनिया में लगभग 60 देश ही ऐसे हैं जिनकी जनसंख्या 2 करोड़ से अधिक है, पर उनमें से किसी ने भी भारत जैसा कीर्तिमान स्थापित नहीं किया है। भारत में टीकाकरण कार्यक्रम 16 जनवरी 2021 को शुरू हुआ था। पहले दिन 1.65 लाख लोगों को टीका लगा था; परन्तु टीकों की उपलब्धता बढ़ने के साथ ही टीकाकरण की रफ्तार भी बढ़ी। पिछले एक माह में चौथी बार एक करोड़ से अधिक लोगों को टीका लगा है। इतना ही नहीं, भारत ने एक बार फिर कोविडरोधी टीके निर्यात करने की घोषणा की है, जिसकी सर्वत्र सराहना हो रही है।

हर वर्ष भारत के द्वितीय राष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के जन्म दिन 5 सितम्बर को शिक्षक दिवस के रूप में मनाया जाता है। डॉ. राधाकृष्णन कहा करते थे कि 'शिक्षक एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को बौद्धिक परम्पराएँ और तकनीकी कौशल पहुँचाने का केन्द्र है और सभ्यता के प्रकाश को प्रज्वलित रखने में सहायता देता है।' एक शिक्षक अपने जीवन काल में हजारों छात्र-छात्राओं को शिक्षित करता है इसलिए शिक्षक को भविष्य का संरक्षक कहा जाता है। पर शिक्षक को भी शिक्षित करने की प्रभावी व्यवस्था होना आवश्यक है ताकि वह अपने शिक्षार्थियों की रुचियों और स्वभाव को जान सके और दिशा दे सके। शिक्षक शिक्षा के माध्यम से शिक्षक में ऐसी क्षमता विकसित की जा सकती है ताकि वह समाज का आचार्य बन सके। अस्तु, प्रस्तुत अंक में शिक्षक शिक्षा के विविध पक्षों यथा शिक्षक शिक्षा की अवधारणा, प्रवेश प्रक्रिया, राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षक शिक्षा, इसकी विद्यमान समस्याएँ एवं इसे बेहतर बनाने के विभिन्न उपायों की विस्तार से चर्चा की गयी है तथा साथ ही अंक की सज्जा को विषय के अनुरूप बनाने का भी प्रयास किया गया है। आशा है कि यह प्रयास पाठकों को अच्छा लगेगा। ❑

शिक्षक शिक्षा की अवधारणा व लक्ष्य

डॉ. यदु शर्मा
प्राचार्य, एस.एस. जैन सुबोध महिला शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, जयपुर (राज.)

गुरुगोविन्द दोऊ खड़े,
काके लागूं पांय
बलिहारी गुरु आपने,
गोविन्द दियो बताय।।

भारत देश में गुरु का स्थान गोविन्द से भी सर्वश्रेष्ठ माना गया है। शिक्षक को राष्ट्र निर्माता कहा जाता है। भारतीय शास्त्रों के अनुसार गुरु को बालक का आध्यात्मिक पिता कहा जाता है। कभी-कभी तो गुरु को गोविन्द से भी बड़ा बताया है, क्योंकि ईश्वर का ज्ञान देने वाला गुरु ही है।

इन दार्शनिक आधारों से परे हट कर देखें तो पाते हैं कि शिक्षक अपने शिक्षण तथा व्यक्तित्व के द्वारा छात्र व छात्राओं के जीवन पर पर्याप्त व उल्लेखनीय प्रभाव डालता है। शिक्षक अपने शिक्षण से छात्रों के ज्ञान, अवबोध, ज्ञानोपयोग, कौशल, अभिरुचियों व अभिवृतियों को प्रभावित करता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में शिक्षण अब एक कला मात्र ही नहीं रहा है, अपितु जैसे-जैसे शिक्षण वस्तुनिष्ठ तथा उद्देश्यपरक बनता जा रहा हैं, जिस कारण यह एक विज्ञान का रूप लेता जा रहा है। शैक्षिक तकनीकी के विकास ने तो इसके वैज्ञानिक स्वरुप को और भी आवश्यक व सार्थक बनाया है। आज विश्व के प्राय: प्रत्येक देश में अध्यापक-शिक्षा के महत्त्व व आवश्यकता को स्वीकार करते हुए इसे प्रभावी एवं कारगर बनाने हेतु निरंतर शोध व नवाचारों को बढ़ावा दिया जा रहा हैं।

शिक्षक शिक्षा एक ऐसी शैक्षिक व्यवस्था है जिसमें अध्यापकों को इस प्रकार शिक्षित करने का प्रयास किया जाता है कि जिससे भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पर आधारित जीवन मूल्यों एवं ज्ञान को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित कर सुन्दर, सभ्य समाज का निर्माण किया जा सके। उसमें शैक्षणिक एवं विकासात्मक उत्तरदायित्वों का आरोपण किया जा सके। शिक्षकों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सांस्कृतिक, दक्षता, प्रयोग आधारित सोच, नवाचारयुक्त मौलिक चिंतन क्षमता व मानवोचित गुणों का विकास किया जा सके; किन्तु वर्तमान समय में शिक्षण को व्यवसाय मान लिया गया है जबकि यह एक सेवा व मिशन है। इस आधार पर शिक्षक शिक्षा की व्यवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ रहे हैं।

परिवर्तनों व समय की मांग के अनुरूप शिक्षक शिक्षा की व्यवस्था को व्यावसायिक अभिवृत्ति, दक्षता, अभिक्षमता, निष्ठा, ईमानदारी, धैर्य एवं संवेगात्मक पहलू पर आधारित किया जाना अपेक्षित है। इस आधार पर ही सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक व आध्यात्मिक पहलू के अतिरिक्त उसके लोकतान्त्रिक मूल्यों को विकसित किया जाना अनिवार्य है। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षक की आधुनिक एवं बदलती भूमिका का सही ढंग से निर्वहन करने की योग्यता व दक्षता उत्पन्न करने की व्यवस्था करना ही शिक्षक शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

शिक्षक शिक्षा के लक्ष्य

शिक्षक शिक्षा के महत्वपूर्ण लक्ष्य व उद्देश्य निम्लिखित हैं -

1. शिक्षक शिक्षा के द्वारा शिक्षकों को प्रचलित व आधुनिक विधियों व तकनीकों का सैद्धान्तिक, व्यावहारिक व क्रियात्मक पक्षों का समुचित ज्ञान प्रदान करना।

2. मनोविज्ञान के आधार पर शिक्षकों में आत्मदर्शन करने की क्षमता विकसित कर आत्मावलोकन व आत्मचिंतन करने की प्रवृत्ति विकसित करना।

3. वैयक्तिक विभिन्नताओं के आधार पर अपने शिक्षण को छात्रों के लिए प्रभावी, सरल, सुगम बनाने की क्षमता विकसित करना।

4. शिक्षण संबंधी विषयवस्तु को विभिन शिक्षण विधियों व प्रविधियों के माध्यम से बालकों को प्रेषित करने की क्षमता विकसित करना। विभिन्न शैक्षिक साधनों, उपकरणों, द्रश्य-श्रव्य साधनों तथा शैक्षिक सामग्री के विकास और उनका प्रयोग करने में अध्यापकों की सहायता करना।

5. अध्यापक को अपने दर्शन निर्माण के साथ-साथ विभिन्न दर्शनों का ज्ञान करवाना जिससे उसकी सोच व्यापक बन सके।

6. छात्रों की प्रकृति के प्रति सूझ बूझ का विकास करने में अध्यापक की सहायता करना। विद्यालय में अध्यापकों को मानवीय गुणों के आधार पर आधारित कर्तव्यों को निभाने में ज्ञान प्रदान करना।

7. कक्षा प्रबंधन तथा शिक्षण सामग्री के सिद्धांतों के बारे में सही जानकारी उपलब्ध कराना। शिक्षक शिक्षा द्वारा छात्रों की निजी समस्याओं से अवगत होकर उन्हें हल करने में सहायता प्रदान करना।

8. विद्यार्थियों को कैरियर संबंधित परामर्श देना जिससे कि वे समाजोपयोगी उत्पादक इकाई के रूप में अपनी सेवाएं समाज को दे सकें।

9. शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता इस प्रशिक्षण से व्यावसायिक जागरूकता तथा दक्षता प्राप्त करने में अध्यापकों को सहायता मिलती है। मनोविज्ञान का ज्ञान प्राप्त होता है जिससे वे विद्यार्थियों के रुचि स्तर व योग्यता के अनुसार व्यवहार कर पाने में समर्थ होते हैं।

10. शिक्षकों में प्रशिक्षण के माध्यम से व्यावसायिक कुशलता विकसित कराना अर्थात् शिक्षक शिक्षण व्यवस्था व शिक्षण व्यवसाय से संबंधित विभिन्न विधियों, युक्तियों तथा प्रवृत्तियों व प्रविधियाँ से परिचित हो जाते हैं। इसके माध्यम से शिक्षक पाठ को योजनाबद्ध ढंग से प्रस्तुत करने में सफल होते हैं।

11. शिक्षकों में अनुशासन बनाए रखने का गुण विकसित होता है उनमें राष्ट्रीय आवश्यकताओं व आकांक्षाओं के अनुरूप कार्य करने की क्षमता विकसित होती है।

12. छात्रों की उपलब्धियों व क्षमताओं का निर्धारण व मूल्यांकन प्रभावी तरीके से करने की योग्यता का विकास होता है।

13. रचनात्मक व सृजनात्मक गुणों का विकास होता है जिससे सैद्धांतिक तथा प्रयोगात्मक तथ्यों का सही ढंग से ज्ञान प्राप्त कर अपने शिक्षण को प्रभावी स्थाई वह सरल बनाने में योगदान देता है।

समय-समय पर शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद शिक्षक शिक्षण कार्यक्रम से संबंधित विभिन्न आयोगों का गठन किया गया जिसमें प्रमुख हैं - राधाकृष्णन आयोग (1948 से 1949) के द्वारा प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रम का नवीनीकरण कर अभ्यास कार्यों को महत्त्व देने पर बल दिया गया। मूल्यांकन के समय अध्यापक की सफलता को भी आधार माना गया। शिक्षा सिद्धांत का पाठ्यक्रम स्थानीय वातावरण के अनुकूल बनाए जाने पर बल दिया गया। प्रोफेसर व व्याख्याताओं द्वारा अखिल भारतीय स्तर पर कार्य करने पर बल दिया गया। उसके बाद माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952- 53) आया तो उसने प्रशिक्षण विद्यालयों में दो प्रकारों को जोड़ दिया जिसमें माध्यमिक शिक्षा प्राप्त छात्र अध्यापकों के लिए 2 वर्षीय पाठ्यक्रम तथा स्नातक स्तर पर 1 वर्षीय पाठ्यक्रम की अभिशंसा की गई। साथ ही छात्रों को एक या अधिक पाठ्यक्रम क्रियाओं में प्रशिक्षण दिए जाने पर जोर दिया गया। विद्यालय में प्रशिक्षण के दौरान अभिनव पाठ्यक्रम तथा कार्यशाला में व्यावहारिक प्रशिक्षण दिए जाने की व्यवस्था किए जाने पर जोर दिया गया

इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान छात्र अध्यापकों से किसी भी प्रकार का शुल्क न लिए जाने पर जोर दिया। कोठारी आयोग ने (1964 - 66) में प्रत्येक शिक्षण संस्था में प्रसार सेवा विभाग की स्थापना करने व विश्वविद्यालय में शिक्षा विभाग की व्यवस्था पर बल दिया, जिसका उद्देश्य शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में नवाचार व अनुसंधानों को समाविष्ट करना। प्रत्येक राज्य में शिक्षण प्रशिक्षण परिषद की व्यवस्था की जाए वह प्रशिक्षण संस्थाओं के पाठ्यक्रम राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप तैयार किए जाएँ। आयोग द्वारा माध्यमिक शिक्षा आयोग की अनुशंसा के अनुसार छात्र अध्यापकों से किसी भी प्रकार का शुल्क न लिया जाए उसे भी अनुमोदित किया गया। पत्राचार पाठ्यक्रम तथा अंशकालीन प्रशिक्षण पाठ्यक्रम की व्यवस्था पर भी जोर दिया गया। विभिन्न प्रकार की अध्यापक प्रशिक्षण संस्थाओं में एकाकी प्रथा को समाप्त करते हुए आपस में नेटवर्किंग को सुदृढ़ करने की बात भी कही गई। अंतर सेवा प्रशिक्षण कार्यक्रम को और अधिक व्यापक बनाने पर जोर दिया गया जिसका उद्देश्य अध्यापकों को अपने ज्ञान अनुभव व व्यवहार को नवाचारों से परिपूर्ण कर 5 वर्ष की अवधि में अंतर सेवा प्रशिक्षण 2 से 3 माह का दिया जाना अनिवार्य बताया गया। अध्यापक शिक्षा के स्तर मान को ऊँचा रखना विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के द्वारा पाठ्यक्रमों में गुणवत्ता लाने का प्रयास करना।

परिवर्तनों व समय की मांग के अनुरूप शिक्षक शिक्षा की व्यवस्था को व्यावसायिक अभिवृत्ति, दक्षता, अभिक्षमता, निष्ठा, ईमानदारी, धैर्य एवं संवेगात्मक पहलू पर आधारित किया जाना अपेक्षित है। इस आधार पर ही सामाजिक, सांस्कृतिक, नैतिक व आध्यात्मिक पहलू के अतिरिक्त उसके लोकतान्त्रिक मूल्यों को विकसित किया जाना अनिवार्य है। राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में शिक्षक की आधुनिक एवं बदलती भूमिका का सही ढंग से निर्वहन करने की योग्यता व दक्षता उत्पन्न करने की व्यवस्था करना ही शिक्षक शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

मुदालियर आयोग ने अध्यापकों के बारे में सेवा की दयनीय स्थिति को निम्न शब्दों में अभिव्यक्त किया 'हमें इस बात ने बहुत दुख के साथ प्रभावित किया है कि अध्यापकों का सामाजिक स्तर वेतन व अन्य दशाएँ संतोषजनक नहीं हैं, हमारा विचार है कि उनकी दशा अतीत की अपेक्षा अधिक गिरती जा रही है इस हेतु अध्यापक सेवा में निम्नलिखित सुधार किये जाने अपेक्षित हैं, अध्यापकों की नियुक्ति प्रणाली संपूर्ण देश में एक समान हो। व्यक्तिगत प्रबंध तथा स्थानीय संस्थाओं द्वारा संचालित विद्यालयों में चुनाव के लिए समितियों में प्राचार्य भी सदस्य हो, परिवीक्षा काल की अवधि 1 वर्ष या 2 वर्ष से अधिक ना हो, समान योग्यता होने पर समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था हो- शिक्षक शिक्षकों के बच्चों हेतु निशुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाए, व उन्हे भी समाज में उचित सम्मान दिया जाए। तभी हम इस गौरवशाली शिक्षक शिक्षा की व्यवस्था कों प्रभावी एवम कारगर बना सकते हैं। ❑

शिक्षक शिक्षा में प्रवेश प्रक्रिया

डॉ. सुमन बाला
व्याख्याता
हरिभाऊ उपाध्याय महिला शिक्षक महाविद्यालय,
हटूण्डी, अजमेर (राज.)

शिक्षक को समाज की रीढ़ कहा गया है। शिक्षक ही समाज में अच्छे नागरिकों को तैयार करता है और सामाजिक बुराइयों को दूर करता है। अत: शिक्षक बनाने हेतु व्यक्तियों का चयन और शिक्षक निर्माण की प्रक्रिया अत्यंत महत्त्वपूर्ण है और इसे गहनता से किया जाना चाहिए। किसी भी राष्ट्र के निर्माण में वहाँ की शिक्षा का गुणवत्तापूर्ण होना आवश्यक है और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिए गुणवत्तापूर्ण शिक्षकों की आवश्यकता होती है। समाज भी अपनी शिक्षा संस्थाओं की गुणवत्ता पर निर्भर करता है और शिक्षा संस्थाओं की गुणवत्ता प्रत्यक्ष रूप से वहाँ के शिक्षकों की गुणवत्ता पर ही निर्भर करती है। इतिहास भी इस तथ्य की पुष्टि करता है कि जब-जब राष्ट्र के शिक्षकों की गुणवत्ता में गिरावट आई है तब राष्ट्र की भी अवनति हुई है और जब आत्मबल एवं अच्छे चरित्र वाले शिक्षक हुए हैं तब गौरवशाली राष्ट्र का निर्माण हुआ है। स्वामी विवेकानंद के शब्दों में 'शिक्षा में शिक्षक की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका है, गुरु पृथ्वी पर दिखाई देने वाला भगवान है।'

कोठारी कमीशन की रिपोर्ट का आरंभ ही इन शब्दों से होता है 'भारत के भविष्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है।' कक्षाओं में हमारी भावी पीढ़ी का निर्माणकर्ता शिक्षक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी शिक्षक के महत्त्व को प्रकट करते हुए कहा गया है कि 'शिक्षक वास्तव में बच्चों के भविष्य को आकार देते हैं, अत: हमारे राष्ट्र के भविष्य का भी निर्माण करते हैं इस नेक योगदान के कारण ही भारत में शिक्षक समाज के सबसे ज्यादा सम्मानित सदस्य थे और सिर्फ सबसे अच्छे और विद्वान ही शिक्षक बनते थे।' परंतु वर्तमान में परिस्थितियाँ बिल्कुल परिवर्तित हो गई हैं। शिक्षण के क्षेत्र का पेशेवर रूप में चयन प्रथम विकल्प नहीं रहा है अपितु सबसे बाद में चुने जाने वाला विकल्प है। शिक्षक ने अपने पूर्व के सम्मानित पद को भी खो दिया है। वर्तमान में शिक्षकों के आत्मबल एवं चरित्र में भी गिरावट नजर आती है, शिक्षक की साख निरंतर धूमिल होती जा रही है। विभिन्न अनुसंधान-अध्ययन शिक्षक की धूमिल होती साख के तीन मुख्य कारण बताते हैं जिसमें सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षक शिक्षा में प्रवेश अथवा चयन प्रक्रिया का त्रुटिपूर्ण होना है। वर्तमान में शिक्षक शिक्षा के चयन की प्रक्रिया अंकों की मेरिट पर आधारित है जिसमें शिक्षक के रूप में प्रवेशित व्यक्ति के केवल संज्ञानात्मक विकास के पक्ष को आधार मानकर उसका चयन कर लिया जाता है। व्यक्ति शिक्षण के प्रति अभिवृत्ति, शिक्षण अभिक्षमता और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उसके व्यक्तित्व और चारित्रिक गुणों पर ध्यान नहीं दिया

जाता है। हालांकि वर्तमान में सामान्य रूप से शिक्षा के प्रवेश/चयन के लिए एक पूर्व परीक्षण निर्धारित किया गया है जिसका स्वरूप कहीं से भी दक्ष शिक्षकों के निर्माण में सहयोगी नहीं कहा जा सकता।

शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों के स्वरूप को देखा जाए तो मुख्य रूप से पाँच प्रकार के कार्यक्रम हमारे देश में चल रहे हैं। प्रथम, पूर्व प्राथमिक, इसमें प्रवेश की न्यूनतम योग्यता उच्च माध्यमिक है और सामान्य सरकार द्वारा संचालित है। शिक्षक शिक्षा का दूसरा स्तर प्राथमिक शिक्षा का है जो 2 वर्षीय पाठ्यक्रम है जिसके लिए प्रवेश परीक्षा द्वारा चयन किया जाता है और जिसकी न्यूनतम योग्यता उच्च माध्यमिक है। तीसरा स्तर माध्यमिक शिक्षा का है जिसमें शिक्षा में स्नातक की उपाधि प्रदान की जाती है और इसकी प्रवेश परीक्षा के लिए न्यूनतम योग्यता किसी भी विषय में स्नातक होना आवश्यक है। शिक्षक शिक्षा के अगले स्तर में अधिस्नातक (स्नातकोत्तर), डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी, मास्टर ऑफ फिलॉसफी और पोस्ट ग्रैजुएट डिप्लोमा इन एजुकेशन आदि B.Ed. के बाद के कुछ उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम हैं जो शिक्षक प्रशिक्षण संस्थाओं जैसे महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, राज्य शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद और राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद, जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थाओं में शिक्षण, अनुसंधान, सेवाकालीन प्रशिक्षण, पाठ्यचर्या निर्माण आदि शिक्षा से संबंधित मुद्दों पर कार्य करने हेतु शिक्षकों का चयन पूर्व के अंक अथवा प्रवेश परीक्षा की मेरिट को आधार बनाकर किया जाता है। शिक्षा का पाँचवा प्रकार विशेष प्रशिक्षण कोर्स है जिसमें तकनीकी विषयों के प्रशिक्षण हेतु विशेष शिक्षकों को तैयार किया जाता है और इन विशिष्ट व्यावसायिक कोर्स में शारीरिक शिक्षा, संगीत, नृत्य, कला एवं चित्रकला, विभिन्न कला और हस्तकला, भाषा (अंग्रेजी, हिंदी आदि) विशेषज्ञों के निर्माण के कोर्स सम्मिलित हैं, जिसके लिए चयन हेतु वही प्रक्रिया अपनाई जाती है। इस प्रकार हमारे देश में शिक्षक शिक्षा के विशिष्ट स्तर हैं पर शिक्षक बनाने से पूर्व की प्रवेश प्रक्रिया एक समान केवल मेरिट को ही आधार बनाया जाता है जो केवल व्यक्ति के भौतिक पक्ष पर आधारित है। शिक्षक शिक्षा हेतु चयन और उसकी तैयारी पर समय-समय पर विभिन्न शिक्षा समितियों, आयोगों और नीतियों ने इसके सुधार के लिए संस्तुतियाँ प्रस्तुत की हैं; परंतु शिक्षक शिक्षा के स्तर में निरंतर अवनति ही हुई है। इसका दूसरा बड़ा कारण वर्तमान में हमारे पास शिक्षक शिक्षा का अनुसंधान आधारित किसी भारतीय मॉडल का न होना है। प्राचीन काल में देश में विश्व विख्यात शिक्षा की संस्थाएँ और दक्ष एवं प्रभावी शिक्षक थे। तब के शिक्षक शिक्षा के स्वरूप का विश्लेषण कर वर्तमान परिस्थितियों के संदर्भ में पुनर्परीक्षण कर उसे अपनाया जा सकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी इस तरफ ध्यान दिलाया गया है कि 'अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता, भर्ती, पदस्थापन, सेवा शर्तें और शिक्षकों के अधिकारों की स्थिति वैसी नहीं है जैसी होनी चाहिए और इसके परिणाम स्वरूप शिक्षकों की गुणवत्ता और उत्साह वांछित मानकों को प्राप्त नहीं कर पाता।' शिक्षकों के लिए उच्चतर दर्जा और उनके प्रति आदर और सम्मान के भाव को पुनर्जीवित करना होगा ताकि शिक्षण व्यवसाय में बेहतर लोगों को शामिल करने हेतु प्रेरित किया जा सके। शिक्षक के गुणों और उनसे अपेक्षाओं के संदर्भ में शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या- 2005 के अनुसार 'शिक्षक शिक्षा को स्कूल व्यवस्था की मांगों के प्रति अधिक संवेदनशील होना चाहिए शिक्षकों को इसके लिए तैयार रहना चाहिए कि वे उत्साहवर्धक, सहयोगी और मानवीय होने चाहिए जिससे विद्यार्थी अपनी संभावनाओं का विकास कर जिम्मेदार नागरिक के रूप में अपनी भूमिका निभाएँ।'

शिक्षक शिक्षा के लिए शिक्षकों के चयन और उनकी शिक्षा में गुणवत्ता पूर्ण सुधार के लिए नीति निर्देशकों द्वारा समय-समय पर की गई अनुशंसाओं के आधार पर उठाए गए कदमों को पर्याप्त नहीं कहा जा सकता। हुआ यह है कि शिक्षा में गुणवत्ता सुधार होने की बजाय इसके स्तर में और अधिक कमी निरंतर हो रही है। इस कमी की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए चट्टोपाध्याय समिति की रिपोर्ट (1983-1985) में लिखा गया है कि 'हमारी अधिकतर शिक्षक शिक्षा की संस्थाएँ बहुत बुरी तरह से अनुपयुक्त है।'

हमारे देश की शिक्षा के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो शिक्षक शिक्षा के लिए एक अनौपचारिक व्यवस्था प्राचीन काल से चली आ रही है। प्राचीन काल में गुरुकुल में रहकर अध्ययन करने वाले शिष्यों में से श्रेष्ठ तथा योग्यतम शिष्य को गुरु के द्वारा आगे चलकर शिक्षण कार्य के दायित्व को ग्रहण करने के लिए उपयुक्त माना जाता था। इस काल में शिक्षक शिक्षा में प्रवेश के आधार का निर्धारण गुरु द्वारा शिष्यों की श्रेष्ठता का निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन होता था। गुरु का कर्तव्य होता था कि योग्यतम शिष्य पर विशेष ध्यान देते हुए, संपूर्ण ज्ञान प्रदान करते हुए गुरु पद के लिए चयनित किया जाए। इस प्रकार व्यक्ति का सभी पक्षों (बौद्धिक, भावात्मक, आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक आदि) की श्रेष्ठता को आधार बनाकर ही शिक्षण कार्य में प्रवेश संभव था।

यशपाल समिति की रिपोर्ट (1993) के अनुसार 'शिक्षक तैयारी के अनुपयुक्त कार्यक्रम विद्यालयों में अधिगम की असंतोषजनक गुणवत्ता की ओर ले जा रहे हैं।' शिक्षक शिक्षा के गुणवत्ता सुधार के लिए कोठारी आयोग से लेकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 तक निरंतर ध्यान दिलाया गया है; परंतु क्रियान्वयन हेतु ठोस कदमों की पहल अभी तक नहीं हो पाई है। आज से लगभग 5 दशक पूर्व भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 में शिक्षक शिक्षा हेतु अध्यापक के चयन की प्रणाली में सुधार की अनुशंसा की थी और उसके क्रियान्वयन 1992 कार्यक्रमों के तहत सुधार हेतु कुछ शिक्षा संस्थाओं को क्रमोन्नत कर उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान और शिक्षा महाविद्यालयों का दर्जा दिया गया एवं देशभर के सभी जिलों में जिला शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान खोले गए जिनमें पूर्व सेवाकालीन शिक्षक शिक्षा के साथ-साथ सेवाकालीन प्रशिक्षण की व्यवस्था दी गई; परंतु शिक्षक शिक्षा हेतु चयन प्रक्रिया की गहनता पर ध्यान केंद्रित नहीं किया गया और शिक्षकों की गुणवत्ता कम से कम होती चली गई।

हमारे देश की शिक्षा के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो शिक्षक शिक्षा के लिए एक अनौपचारिक व्यवस्था प्राचीन काल से चली आ रही है। प्राचीन काल में गुरुकुल में रहकर अध्ययन करने वाले शिष्यों में से श्रेष्ठ तथा योग्यतम शिष्य को गुरु के द्वारा आगे चलकर शिक्षण कार्य के दायित्व को ग्रहण करने के लिए उपयुक्त माना जाता था। इस काल में शिक्षक शिक्षा में प्रवेश के आधार का निर्धारण गुरु द्वारा शिष्यों की श्रेष्ठता का निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन होता था। गुरु का कर्तव्य होता था कि योग्यतम शिष्य पर विशेष ध्यान देते हुए, संपूर्ण ज्ञान प्रदान करते हुए गुरु पद के लिए चयनित किया जाए। इस प्रकार व्यक्ति का सभी पक्षों (बौद्धिक, भावात्मक, आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक आदि) की श्रेष्ठता को आधार बनाकर ही शिक्षण कार्य में प्रवेश संभव था। इस चयन प्रक्रिया में शिक्षण कार्य के लिए अध्ययन की श्रेष्ठता के साथ मानवीय गुणों जैसे सदाचार, कर्तव्यनिष्ठता, सत्यवादिता और आज्ञाकारिता आदि गुणों को भी महत्व दिया जाता था।

बौद्ध कालीन शिक्षक शिक्षा में भी श्रेष्ठता एवं वरिष्ठता के आधार पर शिक्षक चयन किया जाता था। इस काल में शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बुद्ध की धार्मिक शिक्षाओं को प्रसारित करने के लिए गुरुकुल में रहकर विद्यार्जन करना और इसे पूर्ण करने के उपरांत दो आचार्यों की देखरेख में अध्यापन हेतु प्रशिक्षण की व्यवस्था की जाती थी। श्रेष्ठता को आधार के रूप में लेकर आचार्य/उपाध्याय स्तरीय योग्यता अर्जन के बाद अध्यापन के लिए अधिकार प्राप्त होता था। संघों में वरिष्ठ और श्रेष्ठ छात्र ही अध्ययन-अध्यापन कार्य के लिए चयन किए जाते थे। बुद्ध की धार्मिक शिक्षाओं को शिक्षक का पद अनुरूप आचरण और व्यवहारगत परिवर्तन करने में सक्षम होने पर ही उसे अध्यापन कार्य करने की अनुमति दी जाती थी इस प्रकार शिक्षक शिक्षा चयन में ज्ञान के साथ-साथ आचरण एक महत्त्वपूर्ण पक्ष था और शिक्षक सम्मानित स्थान उस काल में भी रखता था।

मध्यकाल की लगभग 500 वर्षीय अवधि में शिक्षक शिक्षा की किसी प्रकार की चयन प्रणाली के बारे में विशेष प्रमाण नहीं मिलते। इस काल में शैक्षिक संस्थाओं के माध्यम से मौलवियों के द्वारा कुरान का उपदेश पहुँचाना ही शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य था। औपचारिक तौर पर शिक्षक शिक्षा के लिए विशेष प्रबंध नहीं किया गया था। इस काल में शिक्षा का सीमांकन मात्र धर्म के प्रचार-प्रसार तक ही कर दिया गया था और इसका संचालन शासकों द्वारा किया जाता था। इस तरह शिक्षक शिक्षा की अवनति इस काल से प्रारंभ हो गई, हालांकि स्वदेशी प्रणाली कठिनाइयों के बावजूद भी इस काल में चलती रही ।

ब्रिटिश काल के लगभग 200 वर्षों के आरंभिक बरसों में तत्कालीन ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली के आधार पर विभिन्न संप्रदायों के ईसाई धर्म गुरुओं के द्वारा ही धर्म प्रचार के लिए शिक्षा दी जाती थी और शिक्षक चयन का उद्देश्य उनके द्वारा इस धर्म के अनुयाई बनाना जिस का माध्यम अंग्रेजी ही रहा था। 1100 से 1850 मिशनरी और सरकारी अनुदानगत

विदेशी शिक्षा प्रणाली संचालित की गई जिसके लिए शिक्षक चयन की प्राचीन परंपरा को दरकिनार कर दिया गया। 1851 से 1941 तक शिक्षा का उद्देश्य मानव निर्माण न होकर केवल उनके कार्यालय कार्य करने के काबिल होने तक ही सिमटकर रह गया।

शिक्षक शिक्षा के लिए उद्देश्य की पूर्ति करने वाले व्यक्तियों, जो अंग्रेजी जानते हों का चयन किया जाता था। इस प्रकार शिक्षक शिक्षा हेतु आचरण श्रेष्ठता का मानदंड दरकिनार कर दिया गया; परंतु इस काल में भी पारंपरिक स्वदेशी पाठशालाएँ जारी रहीं जिनमें गुरु अपने कार्यभार को कम करने के लिए तथा औपचारिक तौर पर योग्य छात्रों को शिक्षण हेतु चयन करते और भारतीय शिक्षा प्रणाली को व्यवहार में लाते थे। शिक्षक शिक्षा की दिशा में इस काल में समय-समय पर सुझाव दिए जाते रहे जिसमें वुड घोषणा पत्र, स्टेनले घोषणा पत्र, भारतीय शिक्षा आयोग, सैडलर आयोग, हरटांग कमेटी और सार्जेंट कमेटी ने शिक्षा के लिए अनेक सुझाव दिए; परंतु अध्यापन कार्य हेतु उपयुक्त व्यक्ति किसे माना जाए और चयन की प्रक्रिया में गहनता का आभाव इस काल में बना रहा।

स्वतंत्रता पश्चात शिक्षक शिक्षा हेतु आयोग, समितियों और शिक्षा नीतियों द्वारा अनेक सुझाव प्रस्तुत किए गए; परंतु इसमें से व्यवहार में बहुत कम लाए जा सकें। विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग (1948) में प्रशिक्षण महाविद्यालयों को पुनः संरचित करने का सुझाव देते हुए शिक्षण के व्यावहारिक अनुभव वाले वर्ग से ही अधिकांश शिक्षकों के चयन का सुझाव दिया। माध्यमिक शिक्षा आयोग (1952-53) ने शिक्षक शिक्षा के उच्चतर माध्यमिक स्तरीय शिक्षा प्राप्ति के लिए 2 वर्षीय प्रशिक्षण और स्नातक स्तरीय शिक्षा प्राप्ति के लिए 1 वर्षीय (जिसे आवश्यकता अनुसार 2 वर्ष के लिए बढ़ाया भी जा सकता है) प्रशिक्षण में प्रवेश की प्रक्रिया सुझाई। फोर्ड फाउंडेशन टीम (1954) ने प्रशिक्षण कार्यक्रमों के गुणवत्ता सुधारने हेतु सुझाव दिया, वहीं एनसीईआरटी में 1961 में 4 वर्षीय एकीकृत शिक्षक शिक्षा का आरंभ किया जिसमें प्रवेश का आधार अंकों की मेरिट को बनाया गया। कोठारी आयोग (1964- 66) ने शिक्षा विद्यालय खोलने के साथ प्रत्येक राज्य अपनी आवश्यकता के क्षेत्र निर्धारित कर अध्यापक प्रशिक्षण की वांछित सीमा के अनुरूप शिक्षकों को प्रवेश देने और अप्रशिक्षित शिक्षकों के प्रशिक्षण पूर्ण करने का सुझाव दिया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1968) में शिक्षक शिक्षा पूर्व कालीन के साथ सेवारत प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान देने की अनुशंसा की। 1913 में राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद का गठन किया गया जिसे 1993 में वैधानिक संस्था बनाया गया। डॉ. वी. एस. झा की अध्यक्षता में माध्यमिक अध्यापक शिक्षा समिति (1915) ने शिक्षक शिक्षा की प्रवेश संबंधी खामियों को बताते हुए कहा कि 'उपयुक्त और उचित प्रवेश प्रक्रिया के अभाव में माध्यमिक शिक्षा संस्थानों में निम्न स्तर के छात्र प्रवेश पा लेते हैं जो कि आगे भी स्तरहीनता उत्पन्न करते हैं।' एनसीटीई स्थाई समिति के द्वारा सभी स्तरों की शिक्षा के लिए माँग आपूर्ति असंतुलन समाप्ति के लिए मानव शक्ति नियोजन पर बल दिया गया और इस हेतु पृथक प्रवेश प्रविधि की व्यवस्था करने को कहा गया। इसके फलस्वरूप शिक्षक शिक्षा में प्रवेश हेतु पूर्वशिक्षक परीक्षा का आयोजन शिक्षण अभिक्षमता विषय को सम्मिलित किए जाने का आरंभ किया गया। शिक्षक राष्ट्रीय आयोग (1983) ने उच्च माध्यमिक स्तर के बाद 5 वर्षीय एकीकृत पाठ्यक्रमों में प्रवेश की अनुशंसा की। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में संपूर्ण शिक्षक शिक्षा सुधार की आवश्यकता पर बल दिया ताकि यह विद्यालय शिक्षा में गुणात्मक सुधार में अर्थपूर्ण योगदान दे सकें।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) के अनुसार 'उत्कृष्ट विद्यार्थी विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र में प्रवेश कर पाए यह सुनिश्चित करने के लिए एक उत्कृष्ट 4 वर्षीय एकीकृत बीएड कार्यक्रम में अध्ययन के लिए बड़ी संख्या में मेरिट आधारित छात्रवृत्ति देश पर घर में स्थापित की जाएगी'। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने अध्यापक शिक्षा की प्रक्रिया को विषय ज्ञान आधारित, भारतीय मान्यताओं के साथ उनके अभ्यास की आवश्यकता पर भी बल दिया है। नीति के अनुसार वर्ष 1930 से केवल शैक्षिक रूप से सुदृढ़, बहुविषयक एकीकृत अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम की क्रियान्वित होंगे और शिक्षक शिक्षा के 4 वर्षीय, 2 वर्षीय और 1 वर्षीय बीएड कार्यक्रमों के लिए उत्कृष्ट

उम्मीदवारों को प्रवेश हेतु आकर्षित करने के उद्देश्य से मेधावी विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्तिओं की स्थापना की जाएगी। नीति के अनुसार 'शिक्षा के लिए एक समान मानकों को बनाए रखने के लिए पूर्व सेवा शिक्षा तैयारी कार्यक्रमों में प्रवेश राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी द्वारा आयोजित उपयुक्त विषय और योग्यता परीक्षणों के माध्यम से होगा और देश की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता को ध्यान में रखते हुए मानकीकृत किया जाएगा'।

इस प्रकार शिक्षक शिक्षा में प्रवेश की प्रक्रिया में सुधार की आवश्यकता पर आजादी के बाद से निरंतर बल दिया जाता रहा है; परंतु प्रणाली की खामियों के कारण इसमें सुधार होने की बजाय गिरावट आती चली गई। वर्तमान में फिनलैंड की शिक्षा प्रणाली को सर्वोत्कृष्ट माना गया है। हम फिनलैंड की शिक्षक शिक्षा में प्रवेश प्रक्रिया का अध्ययन करते हैं तो पाते हैं कि जितने व्यक्ति इस में प्रवेश के लिए आवेदन करते हैं उसमें से 10 प्रतिशत से भी कम इस कार्यक्रम में प्रवेश पाते हैं। इसलिए श्रेष्ठ व्यक्ति ही कार्यक्रमों में प्रवेश कर पाते हैं। प्रवेश की प्रक्रिया अत्यंत कड़ी है जिसके लिए तीन प्रक्रियाओं से गुजरना पड़ता है। सर्वप्रथम एक लिखित परीक्षा जिसमें प्रवेश पाने वाले को कुछ लेखों को पढ़ने के पश्चात उसकी विश्लेषणात्मक योग्यता का मूल्यांकन होता है। दूसरी प्रक्रिया में प्रवेश के लिए एक साक्षात्कार में उसकी अध्यापक बनने के लिए अभिप्रेरणा को समझा जाता है तीसरी और अंतिम प्रक्रिया में 90 मिनट का एक शिक्षण शास्त्रीय कार्य करने को दिया जाता है जिसमें उसकी चिंतन, संप्रेषण और समूह में उसकी अंत: क्रिया करने का मूल्यांकन अवलोकन के आधार पर किया जाता है। फिनलैंड की शिक्षक शिक्षा की प्रवेश प्रक्रिया के लिए ज्ञान और कौशल का आकलन अंतिम चरण न होकर शुरुआत है। शिक्षक बनाने हेतु वे विद्यार्थी चुने जाते हैं जो अच्छे चिंतक, प्रभावी संप्रेषणकर्ता, समूह कार्य के लिए तत्पर और विद्यार्थी के रूप में अपने अनुभवों की विवेचना करने में सक्षम हो। प्रवेश की एक प्रक्रिया है जो केवल 3 घंटे याद की गई विषय वस्तु का मूल्यांकन होकर मूल्यांकनकर्ता द्वारा कुछ दिनों तक मानदंडों के आधार पर ध्यान पूर्वक और गहनता से किया गया चयन है जिसमें चयनित होना किसी बड़ी चुनौती से कम नहीं है। इसके पश्चात व्यक्ति शिक्षा की 5 वर्षीय स्नातक और स्नातकोत्तर डिग्री प्राप्त करने के लिए अधिकतम समय विद्यालय, कोर्स वर्क, अनुदेशन शिक्षा शास्त्र का अध्ययन करने में लगाते हैं तब शिक्षक बनने की प्रक्रिया पूर्ण होती है।

इस आधार पर हमारी प्राचीन शिक्षक शिक्षा में प्रवेश प्रक्रिया जो गुरुओं द्वारा श्रेष्ठ शिष्य का निरंतर अवलोकन करते हुए शिक्षकों का चयन किया जाता था वह अत्यंत प्रभावी प्रक्रिया थी और शिक्षक शिक्षा चयन में अधिक गहनता लिए हुए भी थी; क्योंकि हमारी इस प्रणाली में शिक्षक चयन और उसका निर्माण कार्य निरंतर रूप से गुरु के साथ रहकर किए किया जाता था। इस कारण शायद भारत विश्व के स्थान पर आसीन था जिसकी हजारों वर्ष पुराने शिक्षक शिक्षा की प्रणाली को आधार बनाकर फिनलैंड जैसे देश अपने शिक्षा व्यवस्था को वर्तमान में सर्वोत्कृष्ट बना सकने में सक्षम हुए हैं। हमारे देश में भी शिक्षक शिक्षा के एक ऐसे भारतीय मॉडल की आवश्यकता है जिससे चयनित शिक्षक इस व्यवसाय को अर्थ का माध्यम न मानकर अपने शिक्षक बनने पर गौरवान्वित महसूस करें। भारत में फिर से एक शिक्षक का स्थान सर्वोपरि हो और वह शासक का भी मार्गदर्शन समाज और राष्ट्र हित में करने में सक्षम हो इसके लिए हमारी शिक्षा के रूप में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 द्वारा सुझाई गई राष्ट्रीय परीक्षा के साथ-साथ शिक्षक शिक्षा प्रवेश हेतु भाषा एवं संप्रेषण कौशल, चिंतन प्रक्रिया, शिक्षण अभिक्षमता का अवलोकन और सह शैक्षिक गतिविधियों के संगठन द्वारा मानवीय गुणों के विकास की योग्यता का आकलन प्रवेश का आधार बनाया जाना चाहिए। यदि हम अपने शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों में शिक्षक का चयन सही रूप में कर सकेंगे तभी हम शिक्षा की गुणवत्ता को बनाए रख सकेंगे और राष्ट्र की प्रगति में योगदान देने वाले शिक्षकों और नागरिकों का निर्माण कर सकेंगे। ❑

शिक्षक शिक्षा और राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 : एक मूल्यांकन

डॉ. शान्तेष कुमार सिंह
सह प्राध्यापक,
हरियाणा केंद्रीय वश्वविद्यालय,
महेन्द्रगढ़ (राज.)

किसी भी समाज के निर्माण में शिक्षक की एक अहम भूमिका होती है; क्योंकि ये समाज उन्हीं बच्चों से बनता है जिनकी प्राथमिक शिक्षा का जिम्मा एक शिक्षक पर होता है। शिक्षक ही है जो उसे समाज में एक अच्छा नागरिक बनाने के साथ उसका सर्वोत्त्म विकास भी करता है। शिक्षा देने के साथ ही वह उसे एक पेशेवर व्यक्ति बनने और एक अच्छा नागरिक बनने के लिए प्रेरित करता है। जीवन के मूल्यों, मान्यताओं और संस्कृतियों से बच्चों को शिक्षक ही जोड़ता है, जोड़कर उसे अनुकरण करने के लिए प्रेरित करता है।

देश में मौजूद सभी सफल व्यक्तित्व के पीछे एक शिक्षक की भूमिका जरूर रहती है। एक बच्चे को मार्गदर्शन देने के साथ शिक्षक उसके व्यक्तित्व से भलिभांति परिचित कराता है, उसके अंदर छिपे समस्त गुणों से भलिभांति अवगत कराता है। शिक्षक की बात करें तो इसे ईश्वररूपी दूसरा दर्जा प्राप्त है। भारतीय धर्म में तीन ऋणों, पितृ ऋण, ऋषि ऋण, और देव ऋण का उल्लेख मिलता है। कहा जाता है इन तीनो ऋणों का सफलता से पूर्ण करने पर मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है। माता पिता की सेवा करने पर पितृ ऋण से मुक्त हो जाता है। उसी प्रकार ऋषि ऋण से मनुष्य तब मुक्त हो जाता है जब विद्यार्थी शिक्षा का अध्ययन कर अपने माता-पिता और शिक्षक को सम्मान देता है। वर्तमान दौर में सभी विद्यार्थियों तक शिक्षा की समुचित पहुँच को सुनिश्चित करने हेतु और समाज के समावेशी विकास के लिए परिवर्तनशील और रोजगारोन्मुखी शिक्षा नीति वर्तमान समय की आवश्यकता है ।

शिक्षा नीति किसी भी राष्ट्र की मूलभूत आवश्यकता होती है। जिसमें अतीत का विश्लेषण, वर्तमान की आवश्यकता तथा भविष्य की संभावनाएँ निहित होती हैं। शिक्षा नीति की दृष्टि से विडंबना यह रही है कि 1968 में पहली और 1986 में दूसरी शिक्षा नीति के बाद सरकारों के द्वारा शिक्षा का क्षेत्र उपेक्षित छोड़ दिया गया। यद्यपि 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति, जो 1992 में संशोधित हुई, आधुनिकीकरण पर केंद्रित कही जाती है, जिसमें देश में शिक्षा के विकास के लिए व्यापक ढाँचा, शिक्षा के आधुनिकीकरण और बुनियादी सुविधाएँ मुहैया कराने पर जोर देने की बात कही गई थी। किंतु 1990 के दौर में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की

आवश्यकता में आमूलचूल परिवर्तन किए, जिन्हें पूरा करने में शिक्षा नीति 1986 पूरी तरह से सक्षम नहीं रही। निरक्षरता की दर तो बढ़ी; परन्तु समाज के पिछड़े वर्ग के लोग एवं ग्रामीण क्षेत्र पूर्णतया उपेक्षित ही रहे। विद्यालय तथा महाविद्यालयों की ढाँचागत एवं अध्ययन-अध्यापन से जुड़ी हुई तमाम परेशानियाँ अभी तक भी देखी जा सकती हैं। वर्ष 2014 में बहुमत में आई मोदी सरकार के समक्ष राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक बड़ी चुनौती एवं आवश्यकता के रूप में सामने थी। जिसे देखते हुए जून 2017 में पूर्व इसरो प्रमुख डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया। समिति ने मई 2019 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति का प्रारूप प्रस्तुत किया। तत्पश्चात केंद्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक ने एक व्यापक लोकतांत्रिक नीति अपनाते हुए राष्ट्रीय शिक्षा नीति से संबंधित देश के कोने-कोने से सभी वर्गों के लोगों की राय ली। यह प्रयास प्रधानमंत्री मोदी के 'सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास' की भावना पर आधारित दिखाई देता है। भारतवर्ष के इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ कि शिक्षा नीति बनाने के लिए देश की लगभग 2.5 लाख ग्राम पंचायतें, 6600 ब्लॉक और 650 जिलों से विचार लिए गए। इसमें शिक्षाविदों, अध्यापकों, अभिभावकों, जनप्रतिनिधियों एवं व्यापक स्तर पर छात्रों से भी सुझाव लेकर उनका मंथन किया गया। जन आकांक्षाओं के अनुरूप एवं राष्ट्रीय आवश्यकता और चुनौतियों के अनुरूप नई शिक्षा नीति 2020 की घोषणा की गई है। इस अवसर पर प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने कहा- 'यह शिक्षा के क्षेत्र में बहुप्रतीक्षित सुधार है, जिससे लाखों लोगों का जीवन बदल जाएगा। एक भारत-श्रेष्ठ भारत पहल के तहत इसमें संस्कृत समेत भारतीय भाषाओं को बढ़ावा दिया जाएगा।' नई शिक्षा नीति के कुछ प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैं- मानव संसाधन विकास मंत्रालय का नाम बदलकर शिक्षा मंत्रालय किया गया, केंद्र व राज्य सरकारों के सहयोग से शिक्षा क्षेत्र पर जीडीपी के 6 प्रतिशत हिस्से के बराबर निवेश का लक्ष्य, शैक्षिक पाठ्यक्रम को 5+3+3+4 प्रणाली पर विभाजित किया गया है, तकनीकी शिक्षा, भाषा की बाध्यताओं को दूर करना, दिव्यांग छात्रों एवं महिलाओं के लिए शिक्षा को सुगम बनाने पर बल है, वर्तमान की रटंत एवं बोझिल होती जा रही शिक्षा के स्थान पर रचनात्मक सोच, तार्किक निर्णय और नवाचार की भावना के प्रोत्साहन पर बल दिया जाएगा। अध्ययन-अध्यापन की प्रक्रिया में भाषा का विशेष महत्त्व होता है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था अंग्रेजी के वर्चस्व को बढ़ावा देती है, जिससे बालक के व्यक्तित्व का विकास बाधित होता है और उसके सीखने की गति भी धीमी रहती है।

देश में मौजूद सभी सफल व्यक्तित्व के पीछे एक शिक्षक की भूमिका जरूर रहती है। एक बच्चे को मार्गदर्शन देने के साथ शिक्षक उसके व्यक्तित्व से भलिभांति परिचित कराता है, उसके अंदर छिपे समस्त गुणों से भलिभांति अवगत कराता है। शिक्षक की बात करें तो इसे ईश्वररूपी दूसरा दर्जा प्राप्त है। भारतीय धर्म में तीन ऋणों, पितृ ऋण, ऋषि ऋण, और देव ऋण का उल्लेख मिलता है। कहा जाता है इन तीनों ऋणों का सफलता से पूर्ण करनें पर मनुष्य का जीवन सफल हो जाता है।

मनोविज्ञान के अनुसार बालक अपनी मातृभाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा में सरलता एवं शीघ्रता से सीखता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा नीति में भाषाई विविधता को बढ़ावा और संरक्षण देने की बात कही गई है। कक्षा 5 तक मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा अथवा क्षेत्रीय भाषा को अध्यापन के माध्यम के रूप में अपनाने पर बल है। मातृभाषा में अध्ययन की प्रक्रिया कक्षा 8 और आगे की शिक्षा के लिए भी प्रयोग की जा सकती है। भूमंडलीकरण की प्रक्रिया आज जोरों पर है। विभिन्न तकनीकी संसाधनों के विकास के चलते ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में भी बाधाएँ टूट रही हैं। नई शिक्षा नीति भारतीय अनुवाद और व्याख्या संस्थान की संकल्पना को लेकर आई है, जिसके तहत ज्ञान- विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से अनुवाद और उनकी नई

व्याख्या करने का कार्य सुगमता से हो सके। आज भारतवर्ष में दिव्यांग छात्रों की भी एक बड़ी संख्या है। उनकी आवश्यकताओं के लिए नई शिक्षा नीति- शिक्षण सामग्री और आधारभूत ढाँचा तैयार करने पर बल देती है। शिक्षा व्यवस्था के चार प्रमुख आयाम हैं- विद्यार्थी, अध्यापक, पाठ्यक्रम और ढांचागत सुविधाएँ। इन चारों को ध्यान में रखते हुए नई शिक्षा व्यवस्था व्यापक संभावनाओं के साथ दिखाई देती है। प्रारंभिक शिक्षा में 3 से 8 वर्ष की आयु। जिसमें 3 से 6 वर्ष आंगनवाडी/बालवाड़ी और प्री-स्कूल के माध्यम से मुफ्त सुरक्षित और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा की संकल्पना है। 6 से 8 वर्ष के बच्चों के लिए प्राथमिक विद्यालय में कक्षा 1 और 2 की शिक्षा रहेगी। प्रारंभिक शिक्षा की संकल्पना खेल और गतिविधि आधारित होगी। बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मक ज्ञान पर एक राष्ट्रीय मिशन की स्थापना की संकल्पना भी नई शिक्षा व्यवस्था में है। पाठ्यक्रम और मूल्यांकन नई शिक्षा व्यवस्था के महत्त्वपूर्ण आयाम है, जिसमें पाठ्यक्रम के बोझ को कम करते हुए छात्रों को 21वीं सदी के कौशल के विकास, अनुभव आधारित शिक्षण और तार्किक चिंतन को प्रोत्साहन पर बल दिया जाएगा। कक्षा 6 से ही व्यावसायिक शिक्षा को पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाएगा और इंटर्नशिप की व्यवस्था भी की जाएगी। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् स्कूली शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा तैयार करेगी और विद्यार्थियों के मूल्यांकन के लिए 'परख' नाम से राष्ट्रीय आकलन केंद्र की स्थापना की जाएगी। शिक्षक नियुक्ति में प्रभावी और पारदर्शी प्रक्रिया का पालन किया जाएगा। कार्य प्रदर्शन आकलन के आधार पर पदोन्नति का प्रावधान रहेगा। शिक्षकों के लिए राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक तैयार किए जाएंगे और उनके प्रशिक्षण की भी व्यवस्था रहेगी। अध्यापन के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. डिग्री का होना अनिवार्य होगा।

शिक्षण संस्थानों में शोध तथा फीस के लिए भी मानक तय किए जाएंगे। भारत में शिक्षा के क्षेत्र में विदेशी निवेश एवं वैश्विक आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा के क्षेत्र में ढाँचागत सुधार किए जाएंगे। नई शिक्षा नीति 2020 में सकल नामांकन को 26.3 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक करने का लक्ष्य है, जिसके अंतर्गत उच्च शिक्षा संस्थाओं में 3.5 करोड़ नई सीटों को जोड़ा जाएगा। स्नातक स्तर पर पाठ्यक्रम छोड़ने, विषय बदलने के अवसर दिए जाएंगे और उसी के अनुरूप विद्यार्थी को प्रमाण पत्र दिया जाएगा।

इसके अतिरिक्त और भी अनेक प्रावधान किए गए हैं। नई शिक्षा नीति को प्रस्तुत करते हुए शिक्षा मंत्री डॉ रमेश पोखरियाल निशंक ने कहा- 'देश के प्रधानमंत्री ने एक नए भारत के निर्माण की बात की है- जो स्वच्छ भारत होगा, स्वस्थ भारत होगा, सशक्त भारत होगा, समृद्ध भारत होगा, श्रेष्ठ भारत होगा। उस नए भारत के निर्माण में यह नई शिक्षा नीति 2020 मील का पत्थर साबित होगी।'

शिक्षा नीति 2020 की व्यापक संकल्पनाओं का उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा- 'यह शिक्षा नीति ज्ञान-विज्ञान, अनुसंधान नवाचार, प्रौद्योगिकी से युक्त संस्कारक्षम, मूल्यपरक, हर क्षेत्र में, हर परिस्थिति का मुकाबला करने वाली, पूरी दुनिया के लिए, भारत में ज्ञान की महाशक्ति के रूप में उभर करके आएगी।' नई शिक्षा नीति का लागू होना शिक्षा के क्षेत्र में ऐतिहासिक, साहसिक एवं दूरगामी दृष्टिकोण वाला कार्य है। इसके लिए शिक्षा मंत्रालय एवं मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल निशंक बधाई के पात्र हैं। नई शिक्षा नीति को लागू करने के लिए मंत्रालय द्वारा रोडमैप भी तैयार किया गया है, जिसमें नीति के सभी प्रावधानों को लागू करने की एक समय सीमा तय की गई है। करीब 75 प्रतिशत प्रावधानों को 2024 तक लागू करने का लक्ष्य है। इसी प्रकार बचे हुए प्रावधान भी वर्ष 2035 तक चरणबद्ध तरीके से लागू किए जाएंगे। नई शिक्षा नीति को लागू करने के लिए उच्च स्तरीय कमेटी भी गठित की जाएगी, जो केंद्र और राज्यों के बीच नीति के अमल पर हर साल समीक्षा करेगी। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि आज भारत ज्ञान-विज्ञान, सूचना-प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी के क्षेत्र में तेजी से आगे बढ़ रहा है। कौशल के आधार पर आत्मनिर्भर भारत का संकल्प प्रधानमंत्री मोदी द्वारा संकल्पित किया जा चुका है। ऐसे में नई शिक्षा नीति प्रभावी होगी और यह नए भारत की नींव सिद्ध होगी। ❑

अध्यापक शिक्षा से अपेक्षाएँ

प्रो. सुदेश कुमार शर्मा
प्रोफेसर – शिक्षाशास्त्र,
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
जयपुर परिसर, जयपुर (राज.)

शिक्षा मानव को सुसंस्कृत बनाने का माध्यम है। यह हमारी संवेदनशीलता और दृष्टि को प्रखर करती है, जिससे राष्ट्रीय एकता पनपती है, वैज्ञानिक रीति के कार्यान्वयन की सम्भावना बढ़ती है और समाज तथा चिन्तन में स्वतन्त्रता आती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, (2020) के अनुसार 'शिक्षा पूर्ण मानव क्षमता को प्रदान करने, एक न्यायसंगत और न्यायपूर्ण समाज के विकास और राष्ट्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिये मूलभूत आवश्यकता है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच प्रदान करना वैश्विक मंच पर सामाजिक न्याय और समानता, वैज्ञानिक उन्नति, राष्ट्रीय एकीकरण और सांस्कृतिक संरक्षण के संदर्भ में भारत की सतत प्रगति और आर्थिक विकास की कुंजी है। सार्वभौमिक उच्चतर स्तरीय शिक्षा वह उचित माध्यम है, जिससे देश की समृद्ध प्रतिभा और संसाधनों का सर्वोत्तम विकास और संवर्धन व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और विश्व की भलाई के लिये किया जा सकता है।'

शिक्षा की प्रक्रिया में अध्यापक एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। शिक्षक एक व्यक्ति ही न होकर अपने आप में एक संस्था होता है। जिस प्रकार प्रज्वलित दीप में तेल की समाप्ति पर उसे प्रज्वलित रखने हेतु तेल की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार अध्यापकों में प्रभावी शिक्षण हेतु अध्यापक शिक्षा की आवश्यकता होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में कहा गया है – 'किसी समाज की सांस्कृतिक व सामाजिक दृष्टि का पता उस समाज में अध्यापकों के स्तर से लगता है।' यह कथन भी उचित ही है कि कोई भी राष्ट्र अपने अध्यापकों के स्तर से ऊपर नहीं उठ सकता। निस्सन्देह, राष्ट्रीय प्रगति एवं विकास को अनुप्राणित करने तथा उसे समुचित दृष्टि देने में अध्यापक का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है, एक अपरिहार्य भूमिका है।

अध्यापक किसी भी शैक्षिक व्यवस्था की धुरी है। उत्तम अध्यापकों के निर्माण हेतु अध्यापक शिक्षा अतीव महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है। अध्यापन एक व्यवसाय है। प्रत्येक व्यवसाय हेतु प्रशिक्षण की आवश्यकता होती है। प्रशिक्षण का अर्थ मात्र सीखना नहीं है वरन् उन्हें उत्तरदायित्व के प्रति सजग करना भी है।

शिक्षण एक कौशलात्मक कार्य है जिसमें दक्षता एवं सफलता प्राप्ति हेतु उत्कृष्ट सन्नद्धता अपेक्षित है। यह कार्य अध्यापक शिक्षा के सम्यक संयोजन से ही संपन्न किया जा सकता है। इस प्रकार अध्यापक शिक्षा वह प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से भावी अध्यापकों के शिक्षणोपयोगी कौशलों और सिद्धान्तों को सिखा कर व उनका अपेक्षित अभ्यास करवाकर दक्ष बनाया जाता है।

आधुनिकीकरण की प्रक्रिया के फलस्वरूप विद्यालयीय शिक्षा व्यवस्था में कुछ परिवर्तन हुए हैं। नई सामाजिक, आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल नवीन शिक्षा प्रणाली अपनाई जाने लगी है।

विद्यालयों में उपयुक्त शिक्षण व्यवस्था के लिये सुयोग्य शिक्षकों की आवश्यकता है; क्योंकि परम्परा, संकीर्णता और रूढ़ियों से बढ़ी शिक्षा-व्यवस्था को नई दिशा देने के लिए नवीन विचारों से ओतप्रोत शिक्षक चाहिए और उनको तैयार करने का उत्तरदायित्व शिक्षक-प्रशिक्षण संस्थाओं पर है। इस दृष्टि से एक नया दृष्टिकोण और नई विचारधारा शिक्षक-प्रशिक्षण के सन्दर्भ में पनप रही है। अभिनव चिन्तन और परिवर्तन अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में दृष्टिगोचर हो रहे हैं। परिणामत: अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवस्था के पुरातन प्रतिमानों के स्थान पर अभिनव व उपयुक्त प्रतिमानों की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

वर्तमान में अध्ययन व अध्यापन दोनों के स्तरों में ह्रास देखा जा रहा है। अध्यापक शिक्षा व प्रशिक्षण से सम्बद्ध कार्यक्रमों की व्यापक स्थिति का अवलोकन करने पर निम्नांकित बातें सामने आती हैं -

- प्रशिक्षण संस्थाओं में समन्वय का अभाव।
- सिद्धान्त पर अनावश्यक बल।
- प्रशिक्षण संस्थाओं के कार्यक्रमों में विभिन्नता की समस्या।
- अध्यापक शिक्षा के स्तर के ह्रास की समस्या।
- संसाधन की कमी की समस्या।

इस बारे में दो राय नहीं कि अध्यापक शिक्षा को एक मुक्त एवं गतिशील प्रणाली के रूप में समझा जाये, साथ ही इसे एक सतत प्रक्रिया के रूप में देखा जाये, जिसके निम्नलिखित घटक परस्पर घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित रहते हैं।

- प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा
- विद्यालयों का व्यावसायिक संस्कृति में समावेश
- सेवाकालीन अध्यापक शिक्षा और अथवा सतत व्यावसायिक विकास
- अध्यापकों की उत्तरोत्तर शिक्षा
- विद्यालय विकास व परिष्कार तथा
- अनुसन्धान

अध्यापक शिक्षा की गतिशील अवधारणात्मक सहमति के बावजूद अध्यापक शिक्षा की अधिकांश प्रणालियाँ व प्रतिमान स्थायी अवधारणाओं के अनुसार संगठित किये गये हैं। अध्यापक शिक्षा सुधार मुख्यत: प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा तक ही केन्द्रित रहे हैं। अध्यापक शिक्षा को सचमुच एक मुक्त व गतिशील प्रणाली निर्मित करने में कई समस्याएँ हैं, जिनमें कभी कभी अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवसाय के पुराने सम्प्रत्ययों का धराशायी होना भी समाविष्ट है। ऐसी स्थिति में अध्यापक शिक्षा के सुधार पर परिष्कार हेतु तत्सम्बन्धी मुख्य विषयों का विवचेन कर सम्भावित विकल्पों पर चर्चा परमावश्यक है।

अध्यापकों की शिक्षा के लिए सुसंगत लक्ष्य कई शिक्षाशास्त्री वर्तमान अध्यापक शिक्षा, विशेषकर अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों को अस्पष्ट, मिथ्याभिलाषी, असंगत व कभी-कभी तो विरोधाभासी लक्ष्य वाला मानते हैं। अत: यह आवश्यक है कि अध्यापक शिक्षा की सम्पूर्ण प्रणाली के लक्ष्यों एवं कार्यों को पुन: परिभाषित किया जाए। आवश्यकता है कि अध्यापक शिक्षा के लक्ष्यों व कार्यों, इसके घटकों के क्रमिक सम्बन्धों तथा अध्यापकों के प्रशैक्षणिक विकास के प्रति उनके योगदान को स्पष्ट किया जाए। व्यापक प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा की महती प्रासंगिकता को कम किये बिना ही यह स्पष्ट करना आवश्यक प्रतीत होता है कि भावी अध्यापक प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा के दौरान किन दक्षताओं व अभिवृत्तियों को विकसित कर सकते हैं।

अध्यापक शिक्षा के व्यावसायिक व पारम्परिक, उभयविध प्रतिमानों में यह एक व्यापक स्वीकृति वाला लक्ष्य प्रतीत होता है कि अध्यापक शिक्षा भावी अध्यापकों को इतना योग्य बनाये कि वे उन योग्यताओं व अभिवृत्तियों को विकसित कर सकें जिनके बिना अध्यापन के प्रशैक्षणिक कार्यों को दक्षतापूर्वक, चिन्तनपूर्वक व अद्यतन वैज्ञानिक ज्ञान के अनुरूप निर्वहन कर पाना असम्भव है।

- अध्यापकों द्वारा निभायी जाने वाली व्यावसायिक भूमिका का विश्लेषण ।
- अध्यापकों के व्यावसायिक कर्त्तव्य जैसे शिक्षण, संस्कार, परामर्श, मूल्यांकन, प्रशासन व नवाचार का विश्लेषण । व्यावसायिक भूमिकाओं व कर्तव्यों का पूरा करने में अपेक्षित

योग्यताओं का विश्लेषण।

- इन योग्यताओं की प्राप्ति में सहायक सुस्पष्ट प्रतिमान।
- विश्लेषण के बाद कर्तव्यों व योग्यताओं पर अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों की पुरश्चर्या।

अध्यापक शिक्षा के पारम्परिक प्रतिमान इन आवश्यकताओं को किस प्रकार पूरा कर पायेंगे, यह संदिग्ध लगता है, क्योंकि –

प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा के लिए न्यूनतम दक्षता प्रतिमानों की क्षमता सीमित ही नजर आती है। अधिकांशत: ये प्रतिमान इस बात पर केन्द्रित रहते हैं कि अध्यापकों से जिन भूमिकाओं व दायित्वों को पूरा करने में आवश्यक योग्यताओं का विश्लेषण तथा न्यूनतम-दक्षता व्यूहों पर आधारित व्यावसायिक दक्षता प्राप्ति हेतु स्वीकृत प्रतिमान पल्लवग्राहिता का आभास प्रदान करते हैं।

अध्यापक शिक्षा के पारम्परिक प्रतिमानों में स्तरभूत परिवर्तनों की परमावश्यकता है। प्राथमिक व माध्यमिक दोनों विद्यालयों के अध्यापकों के लिए अध्यापक शिक्षा के पारम्परिक प्रतिमानों को कतिपय व्यावसायिक साधनों से समृद्ध करने से कई परिष्कार सामने आये हैं; परन्तु, साथ ही अध्यापक शिक्षा के कुछ अस्पष्ट व विरोधी लक्ष्य भी निमित्त हो गये हैं। अत: समृद्धात्मक व्यूहरचना की क्षमता सीमित ही लगती है।

व्यावसायीकरण पर केन्द्रित प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा के प्रतिमानों में काफी क्षमता नजर आती है कि वे निर्धारित क्षमताओं को पूरा कर सकें व अध्यापक शिक्षा में सुधार ला सकें।

सशक्त अधिगम वातावरण का निर्माण

अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवसाय के ज्ञानाधार की सामयिक स्थिति से सम्बद्ध समस्याएँ पर्याप्त मात्रा में दिखाई देती हैं। यद्यपि अध्यापन व अध्यापक शिक्षा पर किये गए अनुसन्धानों के माध्यम से कभी-कभी सार्थक प्रगति हुई है, तथापि अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों व पाठ्यक्रमों से सम्बन्धित समस्याएँ और भी अधिक मुखर होती प्रतीत हो रही हैं।

यदि हम अध्यापक शिक्षा तथा अध्यापन व्यवसाय द्वारा प्रदत्त व्यावसायिक सेवा में महत्त्वपूर्ण सुधार लाना चाहते हैं तो हमें अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवसाय हेतु एक सुविकसित ज्ञानाधार की कड़ी से इसे बाँधना होगा, जिसका इस समय काफी हद तक अभाव दृष्टिगोचर होता है। अध्यापन, अध्ययन व अधिगम को अध्यापनवृत्ति के ज्ञानाधार के केन्द्रीय विषय के रूप में देखा जाना चाहिए।

ये गतिविधियाँ व प्रक्रियाएँ सदा

- विशेष सन्दर्भ व विशेष वातावरण में घटती हैं।
- मुख्यत: सम्बद्ध पात्रों के सोद्देश्य क्रियाओं के रूप में विवेचित की जानी चाहिए।
- उद्देश्यों के प्रति निर्देशित होती हैं।
- सारयुक्त होती हैं।
- विभिन्न माध्यमों जैसे शिक्षण व अधिगम उपकरणों से पुष्ट की जानी चाहिए।

अध्यापक शिक्षा की गतिशील अवधारणात्मक सहमति के बावजूद अध्यापक शिक्षा की अधिकांश प्रणालियाँ व प्रतिमान स्थायी अवधारणाओं के अनुसार संगठित किये गये हैं। अध्यापक शिक्षा सुधार मुख्यतः प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा तक ही केन्द्रित रहे हैं। अध्यापक शिक्षा को सचमुच एक मुक्त व गतिशील प्रणाली निर्मित करने में कई समस्याएँ हैं, जिनमें कभी कभी अध्यापक शिक्षा व अध्यापन व्यवसाय के पुराने सम्प्रत्ययों का धराशायी होना भी समाविष्ट है। ऐसी स्थिति में अध्यापक शिक्षा के सुधार पर परिष्कार हेतु तत्सम्बन्धी मुख्य विषयों का विवचेन कर सम्भावित विकल्पों पर चर्चा परमावश्यक है।

वस्तुत: यहाँ छात्रों का अध्ययन व अधिगम प्रक्रियाएँ तथा अधिगम परिस्थितियों का प्रारूप ही मुख्य केन्द्र है, जिसमें छात्रों का अर्थ, ज्ञान व क्रिया की संरचनाओं को विकसित करने का पर्याप्त अवसर मिल सके। एक तरफ अर्थ, ज्ञान व क्रिया के विकास व संरचना को पुष्ट करना तो दूसरी ओर शैक्षिक ज्ञान का सम्प्रेषण, इन दोनों को अलग-अलग स्वरूप में देखा जाना चाहिये।

अध्यापनवृत्ति व अध्यापक शिक्षा से सम्बन्धित अनिश्चित समस्या अभी भी है कि किसी-किसी विषयवस्तु को वैज्ञानिक ज्ञानाधार के रूप में परिभाषित किया जाए। माध्यमिकस्तरीय विद्यालय प्रणाली हेतु अध्यापक शिक्षा से सम्बद्ध भावी शिक्षक प्राय: –

- एक या दो शैक्षिक विषयों में शिक्षा प्राप्त करते हैं।
- अध्यापन वृत्ति अर्थात् सशक्त अधिगम परिस्थितियों के मुख्य क्रियाकलाप हेतु शिक्षा एवं सन्नद्धता को प्राय: बहुत कम महत्व दिया जाता है।

समस्या समाधान क्षमता

अध्यापकों में यह योग्यता होनी चाहिए कि वे शीघ्र परिवर्तनशील क्रियाकलाप से विशिष्ट ऐसी गतिशील परिस्थितियों में प्रभावपूर्ण तरीके से व दक्षता से कार्य कर सकें, जिनमें उन्हें अपने क्रियाकलापों को अत्यन्त शीघ्रता से परिवर्तित करना होता है। अन्य व्यवसायों में सम्पृक्त लोगों की तरह ही अध्यापकों में भी समस्यासमाधान की व्यावसायिक क्षमता होनी चाहिये। अत: अध्यापक के लिए यह आवश्यक है कि

- वे समस्या स्थलों को परिभाषित कर

सकें व प्रश्नों का निर्माण कर सकें ।

- उन्हें समस्यासमाधान हेतु उपयुक्त कौशलों का व्यापक परिचय हो।
- वे इन कौशलों के माध्यम से विशिष्ट समस्याओं का समाधान कर सकें।

अध्यापन एक जटिल क्रिया है। अधिकांश परिस्थितियों में अध्यापन में विचार व क्रिया दोनों की युगपत् आवश्यकता होती है। अध्यापन करते समय अध्यापक को स्थायी रूप से निम्नलिखित गतिविधियाँ करनी पड़ती हैं–

- जटिल परिस्थितियों की व्याख्या।
- समस्यास्थलों को परिभाषित करना।
- विभिन्न दिनचर्याओं को स्वीकार करना। गुणात्मक शिक्षा व प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए विशेष परिस्थितियों हेतु समस्यास्थलों को विकसित करना।
- सम्प्रेषणात्मक कौशलों व समृद्ध एवं विविधतापूर्ण व्यवहाररीति का विकास करना, जिससे वे कक्षा में होने वाली विभिन्न अन्त:क्रियाओं के भार का सामना कर सकें।
- अध्यापक शिक्षा के अधिकांश प्रतिमान अनेक मानक समाधानों व अभ्यासों का प्रतिपादन करते हैं जिनसे इन व्यावसायिक क्रियाकलापों को ही पूरा किया जा सकता है जो ठीक से परिभाषित किये गए हों। परन्तु अध्यापन में ऐसी क्रियाएँ व समस्याएँ सामने आती हैं जो गलत ढंग से परिभाषित की हुई होती हैं।

कुछ प्रतिमान भावी शिक्षकों को कुछ दिनचर्यायें प्रदान करते हैं जिनसे वे अध्यापन की मानकीकृत गतिविधियों व सुपरिभाषित समस्याओं पर विशेषज्ञता प्राप्त कर सकें। कम से कम न्यूनतम दक्षता प्रतिमानों पर कुछ हद तक यह बात लागू होती है।

इसके विपरीत अन्य प्रतिमानों का उद्देश्य समस्या समाधान क्षमता का विकास है। इस विषय में कई बार शंका व्यक्त की गई है कि क्या उपर्युक्त दोनों प्रकार के प्रतिमानों पर आधारित अध्यापक शिक्षा इतनी सक्षम हो सकती है कि वह समस्यास्थलों को परिभाषित करने की दक्षता व तत्परता दोनों को विकसित करने हेतु उपयुक्त अधिगम परिस्थितियों को प्रदान कर सके।

विविध पृष्ठभूमि वाले अध्यापकों को ऐसी परिस्थितियों में रखा जाना चाहिये जहाँ वे सहकारिता एवं सहयोग के माध्यम से विद्यालयीय पाठ्यक्रम के विकास हेतु व्यूहरचनाओं व सूझबूझ को प्राप्त कर सकें। उनके समक्ष उपस्थित होने वाले समस्यास्थल आवश्यक नहीं कि सुपरिभाषित हों। हमारी जिज्ञासा यह होनी चाहिए कि अध्यापक शिक्षा के वर्तमान प्रतिमान जो प्रधानत: वैयक्तिक संस्कृति पर आधारित हैं, उन दक्षताओं के विकास हेतु अधिगम के अनुभव प्रदान करें जो हर प्रकार के विद्यालय व व्यावसायिक अधिगम हेतु अनिवार्य हैं।

सेवारत शिक्षा व सतत व्यावसायिक विकास की क्रमिक अवधारणाएँ

प्राय: यह स्वयंसिद्ध लगता है कि सर्वश्रेष्ठ शिक्षा सर्वश्रेष्ठ अध्यापकों पर ही अधिकतर निर्भर है। द्रुतगति से परिवर्तित होते समाजों में अध्यापन व्यवसाय पर मांग बढ़ती जा रही है। ऐसे में विद्यालय व्यवस्था की वर्तमान गुणवत्ता को बनाये रखने हेतु भी अधिक एवं अभिनव दक्षताओं की अपेक्षा है। चूंकि बहुसंख्यक अध्यापकों को निरंतर अपनी दक्षताओं को अभिनव करने की आवश्यकता है, अत: सेवारत शिक्षा हेतु व्यापक पद्धति के निर्माण व निर्वहन की प्रक्रिया को सशक्त करने व समालोचित करने की आवश्यकता है।

अध्यापकों की सेवारत शिक्षा की अधोलिखित कई समस्याओं का अभी भी समाधान अपेक्षित है –

न ही नियोक्ता और न ही अध्यापक इस बात को समझते हैं कि सतत व्यावसायिक विकास तथा सेवारत शिक्षा अध्यापकों के व्यावसायिक दायित्वों व कार्यभार का अभिन्न अंग है। सेवारत शिक्षा को अध्यापक की इच्छा पर छोड़ना ही दर्शा रहा है कि सर्वश्रेष्ठता की ओर प्रगति कितनी निराशाजनक है। यदि हम अत्युत्तम शिक्षा को यथार्थ में देखना चाहते हैं तो हमें अध्यापन कार्य व अध्यापक शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में सतत व्यावसायिक विकास तथा सेवारत शिक्षा को मान्यता देनी होगी।

सेवारत शिक्षा ऐच्छिक हो या अनिवार्य?

शिक्षा के मूल्यांकन व गुणात्मक नियन्त्रण से जुड़े मुद्दे भी ऐसी समस्याएँ हैं जिनका उचित समाधान अभी तक नहीं हो

पाया है। इस शिक्षा का व्यय कौन वहन करेगा? आवश्यकता इस बात की है कि संख्यात्मक व गुणात्मक दोनों दृष्टियों से सेवारत शिक्षा में अधिक निवेश किया जाए।

शिक्षक प्रशिक्षकों हेतु अध्यापक शिक्षा

यद्यपि अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता व प्रभावशीलता अधिकांशतः शिक्षक प्रशिक्षकों की दक्षता व विशेषज्ञता पर निर्भर है, पर अभी तक इस गतिविधि को व्यावसायिक रूप प्रदान करने हेतु सीमित प्रयास ही किये गए हैं। शिक्षा के क्षेत्र में अधिकांश शिक्षक प्रशिक्षकों को प्रौढ़ अध्येताओं के लिए अपेक्षित शिक्षण विधियों, सहयोग तथा अधिगम में उपयुक्त शिक्षण व प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता है।

वस्तुतः अध्यापक शिक्षा की अनेक समस्याओं की जड़ यही है कि शिक्षक प्रशिक्षकों की शिक्षा का समग्र विषय ही काफी उपेक्षित रहा है। साथ ही, शिक्षक प्रशिक्षकों की औपचारिक योग्यताओं से सम्बद्ध समस्याएँ भी आग में घी का कार्य कर रही हैं। शिक्षक प्रशिक्षकों की औपचारिक योग्यता में अभिवृद्धि तथा उनके लिए सुसंगत प्रारम्भिक शिक्षा व सतत सेवारत शिक्षा का प्रावधान, दोनों बातें अध्यापक शिक्षा में सार्थक परिष्कार लाने में सहायक हो सकती हैं।

अध्यापक शिक्षा में अनुसन्धान

अन्य समस्त व्यवसायों की भाँति शैक्षिक अनुसन्धान व विकास तथा अध्यापक व्यवसाय के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध परमावश्यक है। यह मान्यता सम्प्रति प्रबल होती जा रही है कि सर्वोत्तम शिक्षा, विशेषकर उत्तम अध्यापक शिक्षा हेतु अनुसन्धान अत्यन्त प्रासंगिक है। अत एव अध्यापक शिक्षा से सम्बद्ध अनुसन्धान व विकास का निश्चित विस्तार व समुन्नयन हुआ है।

प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा व सेवारत अध्यापक शिक्षा में आवश्यकता है कि अनुसन्धान व विकास तथा उसमें अध्यापकों की सक्रिय सहभागिता का एक स्पष्ट चित्र खींचा जाए। अध्यापक को एक अनुसन्धाता की भूमिका निभानी चाहिये। इस दिशा में विकास हेतु अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों से जुड़ी सभी संस्थाओं को अध्यापक शिक्षा, शिक्षण व अध्यापकों के क्रियाकलापों से सम्बद्ध कार्यक्रमों को अपनाना चाहिये।

अध्यापक शिक्षा संस्थानों व विद्यालयों में अभिनव सहभागिता

अध्यापक शिक्षा किसी भी रूप व किसी भी स्तर की क्यों न हो, अध्यापक शिक्षा संस्थानों, अध्यपकों व विद्यालयों के बीच सक्रिय क्रमिक सम्पृक्तता तथा पारस्परिक सहभागिता परमावश्यक है।

निम्नांकित तीन क्षेत्रों में, घनिष्ठ सहयोग महत्त्वपूर्ण है ताकि न केवल विद्यालयों, अपितु शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में अधिगम व विकास की कार्यात्मक संस्कृति का स्थापन व निर्वहन किया जा सके –

- प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों का महत्वपूर्ण घटक शिक्षणाभ्यास।
- अनुसन्धान व विकास ।
- विद्यालय परिष्कार की गतिविधियाँ।

सम्प्रति यही देखा जा रहा है कि एक तरफ अध्यापक शिक्षा तथा दूसरी ओर विद्यालय व वहाँ के अध्यापक पूर्णतया पृथक रूप से अपना अपना कार्य कर रहे हैं। प्रारम्भिक अध्यापक शिक्षा में शिक्षणाभ्यास का अत्यन्त महत्व है, परन्तु विद्यालयीय अध्यापक शिक्षा के कार्यक्रमों में इस व्यापक अभ्यास कार्यक्रम को अपनाया नहीं जाता। शिक्षण अभ्यास के विविध प्रारूप भी इस समस्या को और गम्भीर बनाते हैं। कहीं धारावाहिक रूप में अल्पावधि शिक्षणाभ्यास, कहीं दीर्घावधि ब्लाक प्रेक्टिस, कहीं शिक्षक प्रशिक्षण संस्थानों में सूक्ष्म शिक्षण इत्यादि। अध्यापक शिक्षा कार्यक्रमों में अभ्यास पर अनुसन्धान द्वारा कई समस्याएँ प्रकाश में आई हैं। अध्यापक शिक्षा के कई प्रतिमानों में किसी सुसंगत अभ्यासात्मक घटक का अभाव है। अभ्यास एवं अध्यापक शिक्षा के अन्य घटकों मे एकात्मकता लाने हेतु आवश्यक है –

- विद्यालयों के साथ एक सशक्त व परस्पर लाभदायी सहभागिता का विकास।
- सहयोगियों में कार्य व दायित्वों के विभाजन का भेदज्ञान ।
- सहयोगी निरीक्षकों, परामर्शदाताओं व सहभागियों के महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने की दृष्टि से सुशिक्षित उत्तम शिक्षक। ❑

शिक्षा नीति के परिपेक्ष्य में शिक्षक शिक्षा

डॉ. मनीष कुमार
सहायक आचार्य,
भूगोल विभाग,
हरियाणा केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
महेन्द्रगढ़ (हरियाणा)

भारतीय संविधान के चौथे भाग में उल्लिखित नीति निदेशक तत्वों में कहा गया है कि प्राथमिक स्तर तक के सभी बच्चों को अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था की जाय। 1948 में डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में विश्वविद्यालय शिक्षा आयोग के गठन के साथ ही भारत में शिक्षा प्रणाली को व्यवस्थित करने का काम शुरू हो गया था। 1952 में लक्ष्मणस्वामी मुदलियार की अध्यक्षता में गठित माध्यमिक शिक्षा आयोग, तथा 1964 में दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में गठित शिक्षा आयोग की अनुशंसाओं के आधार पर 1968 में शिक्षा नीति पर एक प्रस्ताव प्रकाशित किया गया जिसमें 'राष्ट्रीय विकास के प्रति वचनबद्ध, चरित्रवान तथा कार्यकुशल' युवक-युवतियों को तैयार करने का लक्ष्य रखा गया। मई 1986 में नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गई, जो अब तक चल रही है। इस बीच राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा के लिए 1990 में आचार्य राममूर्ति की अध्यक्षता में एक समीक्षा समिति, तथा 1993 में प्रो. यशपाल समिति का गठन किया गया। नई शिक्षा नीति 2020 भारत की शिक्षा नीति है जिसे भारत सरकार द्वारा 29 जुलाई 2020 को घोषित किया गया। सन् 1986 में जारी हुई नई शिक्षा नीति के बाद भारत की शिक्षा नीति में यह पहला नया परिवर्तन है। यह नीति अंतरिक्ष वैज्ञानिक के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता वाली समिति की रिपोर्ट पर आधारित है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की विशेषता

NEP 2020 को पूर्व इसरो (ISRO) प्रमुख डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में बनी एक समिति की सिफारिशों के आधार पर तैयार किया गया है। इसका उद्देश्य शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार के साथ शिक्षा में नवाचार और अनुसंधान को बढ़ावा देना तथा भारतीय शिक्षा प्रणाली को वैश्विक प्रतिस्पर्धा के योग्य बनाना है। इसके तहत वर्तमान में सक्रिय 10+2 के शैक्षिक मॉडल के स्थान पर शैक्षिक पाठ्यक्रम को 5+3+3+4 प्रणाली (क्रमश: 3-8, 8-11, 11-14, और 14-18 वर्ष की आयु के बच्चों के लिये) के आधार पर विभाजित किया गया है। विदित हो कि प्रस्तावित नीति के तहत कक्षा 5 तक की शिक्षा में मातृभाषा/स्थानीय या क्षेत्रीय भाषा को अपनाने और आगे की शिक्षा में मातृभाषा को प्राथमिकता देने की बात कही गई है। बधिर छात्रों के लिये राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर पाठ्यक्रम सामग्री के विकास तथा 'भारतीय सांकेतिक भाषा' (Indian Sign Language- ISL) को पूरे देश में मानकीकृत करने का लक्ष्य रखा गया है। गौरतलब है कि, इसके तहत पाठ्यक्रम के बोझ को कम करते हुए छात्रों में 21वीं सदी के कौशल के विकास, अनुभव आधारित शिक्षण और तार्किक चिंतन को प्रोत्साहित करने पर विशेष ध्यान दिया गया है। साथ ही इसके तहत कक्षा 6 से ही शैक्षिक पाठ्यक्रम में व्यावसायिक शिक्षा को शामिल कर दिया जाएगा। तकनीकी शिक्षा, भाषाई बाध्यताओं को दूर करने, दिव्यांग छात्रों के लिये शिक्षा को सुगम बनाने आदि के लिये तकनीकी के प्रयोग को बढ़ावा देने और छात्रों को अपने भविष्य से जुड़े निर्णय लेने में सहायता प्रदान करने के लिये 'कृत्रिम बुद्धिमत्ता' (Artificial Intelligence - AI) आधारित सॉफ्टवेयर का प्रयोग करने की बात कही गई है। इस नीति के तहत शिक्षण प्रणाली में सुधार हेतु शिक्षकों के लिये 'राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक' (National Professional Standards for Teachers- NPSTs) का विकास और चार वर्ष के एकीकृत बी.एड. कार्यक्रम की अवधारण प्रस्तुत की गई है।

साथ ही इसके तहत देश में आईआईटी (IIT) और आईआईएम (IIM) के समकक्ष वैश्विक मानकों के 'बहुविषयक शिक्षा एवं अनुसंधान विश्वविद्यालय' (Multidisciplinary Education and Research Universities- MERUs) की स्थापना का प्रस्ताव किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति और शिक्षक शिक्षा

कोई भी शिक्षा प्रणाली उतनी ही अच्छी होती है, जितनी उसके शिक्षक। भारतीय शिक्षा प्रणाली ने, अपने शिक्षकों के आधार पर, दुनिया के कुछ बेहतरीन दिमागों का निर्माण किया है और इनमें से अधिकांश सफल पेशेवर उनकी सफलता में अपने शिक्षकों के योगदान को स्वीकार करते हैं। छात्र जहाँ न केवल पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए शिक्षकों की ओर देखते हैं बल्कि अपने भविष्य के हितों के लिए उनसे मार्गदर्शन की भी अपेक्षा करते हैं। वे ज्यादातर समय स्कूलों में बिताते हैं और इसलिए उनकी आकांक्षाओं को शिक्षकों से बेहतर कोई नहीं समझ सकता है। ऐसे में शिक्षक शिक्षा और उनका शिक्षण अधिगम काफी मायने रखता है। जबकि शिक्षा नीति और पाठ्यक्रम की रूपरेखा दो दशकों से अधिक समय से चली आ रही है, ऐसे शिक्षकों का एक समूह रहा है जो हमेशा शिक्षण के नए तरीके खोजते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि शिक्षण सर्वोत्तम तरीके से दिया जाए। वे स्वयं को निरंतर उन्नत करते हैं और शिक्षार्थियों को भविष्य के लिए तैयार करते हैं। किसी भी आयु वर्ग को कहीं पर कोई भी विषय पढ़ाने में दो प्रमुख घटक शामिल हैं। प्रथम, सामग्री (हम क्या पढ़ाते हैं) और द्वितीय, शिक्षाशास्त्र (हम कैसे पढ़ाते हैं)। और जबकि नई नीति ने पाठ्यचर्या संरचनाओं में एक बदलाव का अनुमान लगाया है, शिक्षकों की शिक्षण प्रणाली को इस तरह से समग्र रूप देने की आवश्यकता है जो इस बदलाव को स्वीकार करते हुए महत्तम उत्पादकता को सुनिश्चित कर सके। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद के द्वारा वर्ष 2022 तक 'शिक्षकों के लिये राष्ट्रीय व्यावसायिक मानक' (National Professional Standards for Teachers- NPST) का विकास किया जाएगा। जो उनकी शैक्षिक व्यवहार्यता को वृहद करेगा। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद द्वारा NCERT के परामर्श के आधार पर 'शिक्षक शिक्षा हेतु राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा' [National Curriculum Framework for Teacher Education (NCFTE), 2021] का विकास किया जाएगा। 2030 तक, शिक्षण के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. होगी। ब्रिटिश शोधकर्ताओं बॉब हडसन, डेविड हंटर और स्टीफन पेकहम के अनुसार, प्रस्तावित नीति की यथेष्ट सफलता के लिए शिक्षक शिक्षा, सीमित आशावादी अपेक्षाओं, केंद्रित शासन व्यवस्था का कार्यान्वयन, नीति निर्धारण में पर्याप्त सहयोग, और राजनीतिक चक्र की नियमितता को सुनिश्चित करेगी। शिक्षण-अधिगम के नए मंच और तकनीक, डिजिटल क्रांति और शैक्षणिक नवाचार लगातार सीखने और शिक्षण के लिए तकनीकों के नए मंच तैयार कर रहे हैं। इस परिप्रेक्ष्य में NEP 2020 रचनात्मकता के नए क्षेत्र को और खोलेगा। KPMG की रिपोर्ट के अनुसार, भारत में 13 प्रतिशत माध्यमिक विद्यालय के शिक्षक पेशेवर रूप से कुशल नहीं हैं। ऐसे में NEP सभी शिक्षकों और प्रधानाध्यापकों को हर साल कम से कम 50 घंटे की सतत व्यावसायिक विकास कार्यशालाओं में भाग लेने का आदेश देती है। यह शिक्षकों के शिक्षण कौशल और उनकी शैक्षणिक तकनीकों को परिष्कृत करेगा। NEP ने शिक्षण-अधिगम अनुभव को समृद्ध कर विचारों के आदान-प्रदान और प्रौद्योगिकी का उपयोग करने के लिए एक मंच प्रदान करने के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक प्रौद्योगिकी मंच (National Educational Technological Forum) नामक एक स्वायत्त निकाय की कल्पना की है।

कोई भी शिक्षा प्रणाली उतनी ही अच्छी होती है, जितनी उसके शिक्षक। भारतीय शिक्षा प्रणाली ने, अपने शिक्षकों के आधार पर, दुनिया के कुछ बेहतरीन दिमागों का निर्माण किया है और इनमें से अधिकांश सफल पेशेवर उनकी सफलता में अपने शिक्षकों के योगदान को स्वीकार करते हैं। छात्र जहाँ न केवल पाठ्यक्रम पूरा करने के लिए शिक्षकों की ओर देखते हैं बल्कि अपने भविष्य के हितों के लिए उनसे मार्गदर्शन की भी अपेक्षा करते हैं।

निष्कर्ष

नई शिक्षा नीति का उद्देश्य एक समावेशी, सहभागी और समग्र दृष्टिकोण को सुगम बनाना है, जो क्षेत्र के अनुभवों, अनुभवजन्य अनुसंधान, हितधारक प्रतिक्रिया, साथ ही सर्वोत्तम प्रथाओं से सीखे गए पाठों को भी ध्यान में रखती है। बेहतरीन शिक्षक शिक्षा के तहत इसके अभिगामी लक्ष्यों को प्राप्त करने में बहुत सरलता होगी। NEP, शिक्षा के प्रति अधिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण की ओर एक प्रगतिशील बदलाव है। निर्धारित संरचना बच्चे की क्षमता- संज्ञानात्मक विकास के चरणों के साथ-साथ सामाजिक और शारीरिक जागरूकता को पूरा करने में मदद करेगी। यह न केवल छात्रों का विकास करेगी अपितु एक शिक्षक का भी बहुमुखी सर्वांगीण विकास और उनकी शैक्षणिक कुशलता में वृद्धि को सुनिश्चित करेगी। अगर इसको वास्तविक दृष्टि में लागू किया जाता है, तो नई संरचना भारत को दुनिया के अग्रणी देशों के बराबर ला सकती है। ❑

शिक्षक शिक्षा के समक्ष वर्तमान समस्याएँ

श्रीमती भारती दशोरा
प्राध्यापक, निम्बार्क शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

शिक्षा संजीवनी है जो अज्ञानता के रेगिस्तान में ज्ञान रूपी गंगा का प्रवाह कर जीवन को ऊर्जावान बनाती है। शिक्षा व्यक्ति एवं समाज की प्रगति के लिए आवश्यक है यह व्यक्ति विशेष को समाज के आधारभूत नियमों, व्यवस्थाओं, प्रतिमानों एवं मूल्यों को सिखाती है। इस प्रकार शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जिसमें प्रतिपल व्यक्ति नये-नये अनुभव प्राप्त करता है एवं सीखता रहता है इसीलिए शिक्षा की प्रक्रिया को औपचारिक अनौपचारिक एवं निरौपचारिक कहा जाता है।

औपचारिक रूप से शिक्षा के केन्द्र विद्यालय एवं महाविद्यालय कहे जाते हैं जहाँ एक निश्चित स्थान पर निश्चित पाठ्यक्रम के तहत् शिक्षा प्रदान की जाती है और शिक्षा प्रदाता को शिक्षक कहते हैं। किसी भी देश का भविष्य उस देश के शिक्षकों के हाथ में होता है; क्योंकि वे ही कक्षा कक्ष में देश के भविष्य को आकार देने का कार्य करते हैं। इनके लिए इन्हें प्रशिक्षण पाठ्यक्रम से गुजरना होता है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद से ही सरकार ने देश की परम्पराओं एवं आधुनिक युग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली को निर्मित करने का प्रयास किया। कई ठोस कदम उठाये गये लेकिन आशानुरूप परिणाम नहीं मिले। अध्यापक शिक्षा के महाविद्यालयों की संख्या तो बढ़ी पर उनकी गुणात्मकता पर कभी ध्यान केन्द्रित नहीं हो पाया।

आज जिस गति से हमारा समाज प्रगति कर रहा है उसकी गति के साथ हमारी शिक्षा व्यवस्था कदम नहीं मिला पा रही है। वैश्वीकरण के इस युग में गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा प्रत्येक बालक का अधिकार है जो उसे उत्तम शिक्षक ही प्रदान कर सकते हैं। इसलिए शिक्षकों के प्रशिक्षण पर बहुत अधिक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। अध्यापक शिक्षा संस्थाओं के नियमन हेतु NCTE नामक संस्था 1993 में स्थापित की गई; परन्तु अध्यापक शिक्षा के स्वरूप में सुधार या समय के अनुरूप इसमें परिवर्तन के लिए संस्था के पास कोई स्थायी युनिट नहीं है। इन्हें इसके लिए बाहर के विशेषज्ञों पर निर्भर रहना पड़ता है। अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की कुंजी है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षकों के माध्यम से ही विद्यार्थियों तक प्रभावी रूप से पहुँचा जा सकता है इसलिए शिक्षण प्रशिक्षण की प्रभाविता पर ध्यान दिश जाना आवश्यक हो गया है ताकि यह शैक्षिक बदलाव का

माध्यम बन सके।

अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत संस्थाओं एवं लोगों को यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि अध्यापक शिक्षा सामान्य शिक्षा से वहीं अधिक महत्त्वपूर्ण है। अध्यापक शिक्षा को सार्थक और प्रभावकारी बनाने के लिए योग्य प्रशिक्षकों के चयन के साथ साथ निर्दोष मूल्यांकन प्रक्रिया तय करनी होगी शिक्षा अधिकार कानून 2009 के अनुरूप प्रभावी शिक्षक प्रशिक्षण ही शिक्षकों के दृष्टिकोण में वास्तविक बदलाव ला सकता है।

अध्यापक शिक्षा की गुणवत्ता को कायम रखने के लिए विभिन्न शिक्षा आयोगों ने अपनी सिफारिशें की। NCTE के प्रयासों के बावजूद कई ऐसी कमियाँ हैं जो आज शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में समस्या बन कर उभर रही है।

अध्यापक शिक्षा के पाठ्यक्रम कई बार परिवर्तित हुए लेकिन आज भी इसमें योग्य एवं प्रभावशाली शिक्षक बनाने के लिए उचित विषयवस्तु का समावेश नहीं है। सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम का प्रायोगिक कार्य से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है इसलिए सैद्धान्तिक पाठ्यक्रम बहुत हद तक उबाऊ प्रकृति का लगने लगता है।

आज भी भारत वर्ष में शिक्षण विधियों के नाम पर परम्परागत शिक्षण विधियाँ ही हैं इनमें अन्वेषण एवं प्रयोगों के लिए बहुत कम सम्भावनाएँ हैं। इसलिए छात्राध्यापक शिक्षण विधियों का सरलता से प्रयोग नहीं कर पाते जिससे शिक्षण अप्रभावी रहता है। साथ ही शिक्षणाभ्यास भी एक दिखावा मात्र बन कर रह गये जिससे शिक्षण कौशल एवं दक्षताओं का विकास नहीं हो पाता है।

इसके अतिरिक्त स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर उत्तीर्ण विद्यार्थियों के लिए इन पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिये न्यूनतम प्रतिशत 45 एवं 50 रखे गये हैं ऐसा होने पर कई बार कमजोर शैक्षिक पृष्ठभूमि छात्रों का भी प्रवेश हो जाता है एवं स्नातक एवं स्नातकोतर के अच्छे

अंकों की अनदेखी होती है।

शिक्षण संस्थाओं के पास पर्याप्त भौतिक संसाधनों का भी अभाव है जिससे छात्राध्यापकों को नवीन तकनीकी, उपकरणों एवं मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के उपयोग जैसा ज्ञान नहीं बन पाते हैं।

राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद् ने शिक्षक महाविद्यालयों में अध्यापन कराने वाले शिक्षकों की जिस योग्यता को मानदण्ड के रूप में दिया है कई जगहों पर उनका पालन भी नहीं किया जाता है एवं ऐसे शिक्षकों से अध्यापन करवाया जाता है जिनका स्वयं का ज्ञान भी पूर्ण नहीं है। उन्हें कम वेतन पर रख कर संस्थाएँ उनका शोषण करती हैं एवं छात्राध्यापक को पर्याप्त शैक्षिक वातावरण भी नहीं मिल पाता है।

आज जिस गति से हमारा समाज प्रगति कर रहा है उसकी गति के साथ हमारी शिक्षा व्यवस्था कदम नहीं मिला पा रही है। वैश्वीकरण के इस युग में गुणवक्ता पूर्ण शिक्षा प्रत्येक बालक का अधिकार है जो उसे उत्तम शिक्षक ही प्रदान कर सकते हैं । इसलिए शिक्षकों के प्रशिक्षण पर बहुत अधिक ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। अध्यापक शिक्षा संस्थाओं के नियमन हेतु NCTE नामक संस्था 1993 में स्थापित की गई; परन्तु अध्यापक शिक्षा के स्वरूप में सुधार या समय के अनुरूप इसमें परिवर्तन के लिए संस्था के पास कोई स्थायी युनिट नहीं है।

अध्यापक शिक्षा कार्यक्रम में प्रयोगात्मक अनुसंधान की कमी को भी महसूस किया जाता है प्रयोग से चिन्तन, मनन, सृजन क्षमताओं का विकास होता है। लेकिन कई बार योग्य प्रशिक्षकों के अभाव में यह सम्भव नहीं हो पाता है।

अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में राज्य शासन एवं विश्वविद्यालयों का नियन्त्रण कम है ऐसी स्थिति में स्ववित्तपोषित कॉलेज के प्रबन्धकों का हाल तो यह है कि वह इस पाठ्यक्रम के द्वारा वह अपने कोष भरने में लगे हैं। इससे शिक्षक प्रशिक्षण के स्तर में गिरावट आना अवश्यंभावी है।

इन सब बातों पर दृष्टिपात करने से एक बात तो स्पष्ट हो जाती है कि जिस तरह की स्थिति से अध्यापक शिक्षा गुजर रही है उसके चलते भारत की कक्षाओं में नवीन पीढ़ी का जो सृजन हो रहा है वह कभी भी संतोषप्रद नहीं कहा जा सकता है। यह एक यक्ष प्रश्न भी है। ❑

शिक्षक शिक्षा और शिक्षक की भूमिका

डॉ. राजीव कुमार सिंह

सहायक प्राध्यापक,
राजनीति विज्ञान विभाग,
हरियाणा केंद्रीय विश्वद्यालय,
महेंद्रगढ़ (हरियाणा)

शिक्षा प्रणाली किसी भी देश के सर्वांगीण विकास की एक महत्त्वपूर्ण नींव मानी जाती है। एक शिक्षित व्यक्ति ही एक प्रगतिशील समाज की कल्पना कर सकता है जो एक विकसित देश का आधार बनता है। भारत में 'शिक्षा' प्राचीन काल से ही एक महत्त्वपूर्ण आयाम रही है; किंतु इस शिक्षा से अवगत कराने वाले मानवीय पहलू पर कम ही चर्चा रही हैं। हालांकि इस संबंध में समय-समय पर कमीशनों, आयोगों ने अपने अपने सुझाव दिए हैं; किंतु इस पहलू की समग्रता से देखने का प्रयास प्राय: ही रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस संदर्भ में उल्लेखनीय रही है जिसके निर्माताओं ने समय-समय पर प्रस्तुत विभिन्न दस्तावेजों जैसे कि कोठारी आयोग, राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 और एन.सी.ई.आर.टी. एवं सी.बी.एस.ई. द्वारा लाए गए स्कूली शिक्षा पर विभिन्न दस्तावेजों को एक पटल पर लाया तथा नीति निर्माण के पहले विस्तृत परामर्श एवं चर्चा सुनिश्चित की। वर्तमान में भारतीय शिक्षा व्यवस्था अपनी जटिल प्रक्रियाओं और लक्ष्यहीन स्वभाव के लिए जानी जाती है, जिसमें बदलाव जरूरी है और एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था को कायम करना है जो प्रगतिशील हो, लचीली हो, जो प्रौद्योगिकी और कौशल पर बल देती हो और जिसका उद्देश्य एक सक्षम, कुशल और नैतिक शिक्षक बनाना हो। कोठारी कमीशन 1966 ने कहा था कि शिक्षा की गुणवत्ता और राष्ट्रीय विकास को प्रभावित करने वाले सभी कारकों में शिक्षक की गुणवत्ता और उसका चरित्र सबसे महत्त्वपूर्ण है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भी शिक्षक की भूमिका को लेकर समान बात करती है - 'शिक्षक बच्चों के भविष्य को आकार देते हैं जो राष्ट्रीय विकास में एक बड़ी भूमिका निभाते हैं। अत: राष्ट्रीय विकास में शिक्षकों की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण है जो कक्षा में मानव संसाधन के निर्माण के रूप में शुरू होती है।

एक सशक्त शिक्षक व्यवस्था के विचारों में पहाड़ों को हिलाने की ताकत है पर जमीनी हकीकत काफी अलग है। जस्टिस जेएस वर्मा कमिटी की रिपोर्ट 2012 में कहा गया है खंडित शिक्षक शिक्षा व्यवस्था ने 370 मिलियन से अधिक बच्चों को खतरे में डाल रखा है..... निरीक्षण करने पर निजी शिक्षक शिक्षा संस्थानों (टी ई आई) के स्कोर में बुनियादी ढाँचे के नाम पर केवल आधारशिला पाया गया और 99 प्रतिशत उत्तीर्ण दर। रिपोर्ट से यह भी पता चला कि औसतन 85 प्रतिशत शिक्षक योग्यता के बाद की योग्यता परीक्षा केंद्रीय शिक्षक पात्रता परीक्षा (सी.टी.ई.टी.) को उत्तीर्ण करने में विफल रहे। भारतीय कक्षाओं में खराब शिक्षा के परिणामों के लिए शिक्षकों को दोष देने के बजाय (एन.ई.पी.) 2020 शिक्षक की गुणवत्ता और प्रेरणा की कमी

के लिए शिक्षक शिक्षा भर्ती, तैनाती और सेवा शर्तों की इन निराशाजनक स्थितियों को जिम्मेदार ठहराता है। शिक्षक की शक्ति को स्वीकार करते हुए एनपीई 2020 ने प्रणालीगत सुधार किए हैं जो 'शिक्षण' को उज्ज्वल और प्रतिभाशाली युवा दिमाग के लिए एक आकर्षक पेशे के रूप में उभरने में मदद करेंगे। यह शिक्षकों को सशक्त बनाने और इस पेशे के लिए उच्च सम्मान और स्थिति को बहाल करने के लिए कई सुधारों का प्रस्ताव करता है, यह उम्मीद करते हुए कि अंततः शिक्षण को अपने पेशे के रूप में चुनने के लिए सबसे अच्छे दिमाग और प्रतिभा को आकर्षित करेगा।

नई शिक्षा नीति में सेवा पूर्व की शिक्षा के कुछ मुख्य केंद्र बिंदु :

4 वर्षीय एकीकृत बी.एड. स्कूली शिक्षकों के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता, शिक्षा के साथ-साथ एक विशेष विषय में एक बहु विषयक और एकीकृत दोहरी प्रमुख स्नातक डिग्री के रूप में माना जाता है इस पाठ्यक्रम में प्रवेश राष्ट्रीय परीक्षण एजेंसी (NTA) द्वारा आयोजित उपयुक्त विषय और योग्यता परीक्षणों के माध्यम से होगा।

सभी बहु-विषयक विश्वविद्यालयों को एक शिक्षा विभाग स्थापित करने और बी.एड. चलाने का निर्देश दिया गया है। इसके अलावा वे अपने बी.एड. की शिक्षा को बढ़ाने के लिए शिक्षा के विभिन्न पहलुओं में अत्याधुनिक शोध भी करेंगे।

निजी या सरकारी स्कूल में भर्ती के लिए शिक्षक को टीईटी के माध्यम से उत्तीर्ण होना चाहिए, एक प्रदर्शन कक्षा देना चाहिए साक्षात्कार पास करना चाहिए और स्थानीय भाषा का ज्ञान होना चाहिए।

NEP विशेष रूप से संगीत, नृत्य, कला, शिल्प, और सामाजिक शिक्षकों की कमी से निपटने के लिए शिक्षकों की स्कूल परिसर में भर्ती करने और उन्हें स्कूलों को इस समूह में साझा करने के विचार को बढ़ावा देता है। शिक्षक पात्रता परीक्षा (TET), अब स्कूली शिक्षा के सभी चरणों (फाऊंडेशनल, मिडिल और सेकेंडरी) के शिक्षकों को कवर करने के लिए बढ़ा दी जाएगी।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 शिक्षा प्रणाली में मौलिक सुधारों के केंद्र में शिक्षकों को रखती है। यह हमारे समाज के सबसे सम्मानित और आवश्यक सदस्यों के रूप में सभी स्तरों पर शिक्षकों को फिर से स्थापित करने में मदद करेगा; क्योंकि वह वास्तव में हमारी अगली पीढ़ी के नागरिकों को आकार देते हैं। नई शिक्षा नीति में सभी स्तरों पर शिक्षण पेशे में प्रवेश करने के लिए सबसे अच्छे और प्रतिभाशाली लोगों की भर्ती करने के उपायों का प्रस्ताव है जिसमें आजीविका, सम्मान, गरिमा और स्वायत्तता सुनिश्चित करने के साथ-साथ नियंत्रण और जवाबदेही के बुनियादी तरीकों को भी शामिल किया गया है। पूर्व शिक्षा मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक ने बताया कि नई शिक्षा नीति आचार्य देवो भाव की विरासत को मानते हुए शिक्षक शिक्षा की आलोचना पर जोर देती है। शिक्षक शिक्षा स्कूली शिक्षकों का एक समूह बनाने में महत्वपूर्ण है जो अगली पीढ़ी को आकार देगा। शिक्षकों को एक ही समय में सुधार, परिवर्तन और प्रदर्शन के गुणों के साथ सुविधा प्रदान की जाएगी। 21वीं सदी की जरूरतों के साथ-साथ शिक्षकों की तैयारी एक ऐसी गतिविधि है जिसके लिए न केवल बहु विषयक दृष्टिकोण और ज्ञान स्वभाव, बल्कि मूल्यों के निर्माण और सर्वोत्तम आकाओं के तहत अभ्यास के विकास की आवश्यकता होगी। शिक्षक रिक्तियों को जल्द से जल्द समयबद्ध तरीके से भरा जाएगा विशेष रूप से वंचित क्षेत्रों और बड़े छात्र-से-शिक्षक अनुपात या निरक्षरता की उच्च दर वाले क्षेत्रों में। स्थानीय शिक्षकों या स्थानीय भाषाओं से परिचित लोगों को नियुक्त करने पर विशेष ध्यान दिया जाएगा बुनियादी साक्षरता और संख्यात्मक प्रदान करने के लिए शिक्षकों को निरंतर व्यावसायिक विकास के साथ प्रशिक्षित, प्रोत्साहित और समर्थित किया जाएगा। शिक्षक शिक्षा के लिए एक नया और व्यापक राष्ट्रीय पाठ्यचर्चा ढाँचा, एनसीएफटीई 2021 एनसीटीई द्वारा एनसीईआरटी के परामर्श से तैयार किया जाएगा। 2030 तक शिक्षण के लिए न्यूनतम डिग्री योग्यता 4 वर्षीय एकीकृत B.Ed. होगी।

> **नई शिक्षा नीति में सभी स्तरों पर शिक्षण पेशे में प्रवेश करने के लिए सबसे अच्छे और प्रतिभाशाली लोगों की भर्ती करने के उपायों का प्रस्ताव है जिसमें आजीविका, सम्मान, गरिमा और स्वायत्तता सुनिश्चित करने के साथ-साथ नियंत्रण और जवाबदेही के बुनियादी तरीकों को भी शामिल किया गया है। पूर्व शिक्षा मंत्री रमेश पोखरियाल निशंक ने बताया कि नई शिक्षा नीति आचार्य देवो भाव की विरासत को मानते हुए शिक्षक शिक्षा की आलोचना पर जोर देती है।**

NEP 2020 की सफलता प्रमुख रूप से देश के शिक्षक शिक्षा और क्षमता निर्माण रणनीति पर निर्भर करेगी। शिक्षक क्षमता निर्माण अपने आप में एक कौशल आधारित पहल होनी चाहिए जिसमें शिक्षकों के सीखे हुए कौशल क्षमताओं का औपचारिक मूल्यांकन शामिल है और फिर उन्हें पेशेवर विकास और उनके प्रदर्शन के आधार पर बेहतर भविष्य की संभावनाओं के लिए मार्गदर्शन करना शामिल है। देश के शिक्षक समुदाय के साथ NEP 2020 की नीति, रणनीति और कार्यान्वयन का उचित समामेलन करने की आवश्यकता है और तभी NEP 2020 भारत के लिए एक बेहतर शिक्षा प्रणाली के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। ❑

शिक्षक शिक्षा की वर्तमान स्थिति – अपेक्षित परिवर्तन

डॉ. बबीता सोलंकी

सहायक आचार्य, जवाहर लाल नेहरू स्नातकोत्तर शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय, सकतपुरा, कोटा (कोटा)

एक शिक्षक अपने जीवन के अंत तक मार्गदर्शक की भूमिका अदा करता है और समाज को नवीनता से जोड़ने के लिए नित नई राह दिखाता रहता है। इसीलिए समाज में शिक्षक को उच्च स्थान प्राप्त है। सफल जीवन जीने के लिए शिक्षा बहुत उपयोगी है जो हमें गुरु द्वारा प्रदान की जाती है। गुरु सदा ही अपने विद्यार्थी को आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करता रहता है। शिक्षक का दर्जा समाज में हमेशा से ही पूजनीय रहा है। गुरु की महिमा अपरंपार है हम इन्हें अलग-अलग नामों से संबोधित करते हैं शिक्षक आचार्य अध्यापक गुरु टीचर यह सभी शब्द एक ऐसे व्यक्ति को चित्रित करते हैं जो हमें ज्ञान की रोशनी प्रदान करता है जिसका योगदान किसी देश का भविष्य निर्माण कर सकता है सही मायनों में शिक्षक ही भविष्य की सुंदर इमारत के नींव के पत्थर को गढ़ता है मजबूत बनाता है शिक्षक ही समाज की आधारशिला है।

अब सवाल यह उठता है कि जिस शिक्षक के कंधों पर इतनी बड़ी जिम्मेदारी और दायित्व है उसकी शिक्षा कैसी होनी चाहिए? तो उत्तर है ठीक वैसी ही होनी चाहिए जैसे अर्जुन के लिए श्री कृष्ण विवेकानंद जी के लिए रामकृष्ण परमहंस और वर्तमान समाज के लिए सर्वपल्ली डॉक्टर राधाकृष्णन और एपीजे अब्दुल कलाम।

यदि बिना किसी हिंसात्मक क्रांति के बड़े पैमाने पर परिवर्तन करना है तो केवल एक ही साधन है जिसका प्रयोग किया जा सकता है और वह है शिक्षा। शिक्षा एक ऐसा साधन है जिससे किसी समाज का स्वरूप परिवर्तन किया जा सकता है; परंतु शर्त है कि इसको प्रदान करने वाला शिक्षक पूर्ण रूप से शिक्षित वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सकारात्मक विचारधारा वाला हो। सन् 1983-85 चट्टोपाध्याय आयोग 'राष्ट्रीय अखंडता और एकता की भावना का महत्व; वैज्ञानिक दृष्टिकोण की आवश्यकता; अपने काम में उत्कृष्टता के लिए प्रतिबंध रहना और अपने समाज के लिए चिंतित होना एक नए शिक्षक की अभिकल्पना होनी चाहिए।'

समाज किस दिशा में अग्रसर हो रहा है; नए समाज की संरचना में नए लोगों की भूमिका होनी चाहिए; क्योंकि उन्हीं के द्वारा समाज के नवीन स्वरूप का निर्माण होगा आगे आने वाली नई पीढ़ी नए संस्कार ग्रहण करेगी शिक्षक शिक्षा द्वारा विद्यार्थी शिक्षकों में राष्ट्रीय अखंडता और एकता की भावना का संचार तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण को विकसित करना शिक्षक शिक्षा की वर्तमान आवश्यकता है शिक्षण एक जिम्मेदारी वाला कार्य है। शिक्षक शिक्षा को सशक्त बनाने और शिक्षक प्रशिक्षणार्थी के व्यक्तित्व के विकास के लिए शिक्षक शिक्षा के प्रशिक्षण की बहुत आवश्यकता है। कोठारी आयोग (1964-66) ने शिक्षा में गुणात्मक सुधार के लिए शिक्षकों को बतौर पेशेवर तैयार करने पर बल दिया था आयोग का मत था- 'शिक्षक शिक्षा को एक तरफ विश्वविद्यालयों की अकादमिक मुख्यधारा में और दूसरी ओर स्कूली जीवन तथा शैक्षिक विकास में लाने की बात पर जोर दिया जाए।'

वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम शिक्षकों को एक ऐसी व्यवस्था में समायोजित करने के लिए प्रशिक्षण देता है जिसमें शिक्षा के बारे में यह समझाया जाता है कि उसमें केवल सूचनाओं का प्रसार होता है प्रचलित शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में ना तो नए विचारों को संदर्भ में लिया जाता है न ही स्कूल और समाज से जुड़े मुद्दों की इसमें चर्चा हो पाती है इसमें नए प्रकार के शैक्षणिक अनुभवों के लिए कोई स्थान नहीं होता है।

वर्तमान समाज में शिक्षक शिक्षा का अस्तित्व

भारत की 15 वी जनगणना वर्ष 2011 में साक्षरता का प्रतिशत 65 प्रतिशत से बढ़कर 75 प्रतिशत हो गया शिक्षा की मांग और गुणवत्ता को बढ़ाने के लिए प्रशिक्षित शिक्षकों की मांग बढ़ी शिक्षकों के कौशल में विकास किए जाने की आवश्यकता पड़ी और बड़ी तादात में शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान खुले। प्रशिक्षण संस्थानों में प्रशिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए नवीन विचारों व उपायों पर निरंतर विचार किया जाता रहा है। शिक्षक प्रशिक्षण के अनुभवों से पता चलता है कि उसमें ज्ञान को प्रदत्त की तरह बिना सवाल उठाए पाठ्यचर्या में बांध दिया जाता है।

वर्तमान में बुद्धि की गद्दी पर स्वार्थ बैठा है और धन हमारा भगवान बन गया है। भाषण की इस आंधी में कर्म की माटी बिखर गई है।

वर्तमान में शिक्षक शिक्षा के दोष

1. शिक्षक शिक्षा वर्तमान में धनार्जन का साधन बन गया है।
2. शिक्षक शिक्षा सामाजिक दायित्व संभालने के स्थान पर न्यून कोटि का व्यवसाय बन गया है।
3. शिक्षक शिक्षा में ना तो बौद्धिक प्रशिक्षण हो पा रहा है और ना ही भावनात्मक कौशल, आत्मिक कौशल एवं शैक्षिक।
4. शिक्षक शिक्षा एक सामान्य नागरिक में विशिष्ट गुणों के विकास के लिए प्रदान की जाती है वर्तमान स्थिति में इन मानवीय गुणों का ह्रास होता जा रहा है।
5. शिक्षक शिक्षा द्वारा प्रशिक्षणार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास किया जाता है; परंतु आज यह एक औपचारिकता मात्र रह गई है।
6. शिक्षक शिक्षा वर्तमान में सामाजिक आवश्यकता नहीं बल्कि व्यापारिक आवश्यकता बन गई है।
7. शिक्षक शिक्षा संस्थान वर्तमान में ऐसे कारखाने बन गए हैं जहाँ एक ही तरह की भेड़ों का उत्पादन किया जा रहा है।

शिक्षक शिक्षा की वर्तमान स्थिति को सुधारने के उपाय

शिक्षक शिक्षा भी अन्य व्यवसायों की तरह एक व्यवसाय है; परंतु यह एक ऐसा व्यवसाय है जो स्वयं के साथ-साथ अन्य व्यावसायियों की भी जड़े मजबूत करता है।

शिक्षक शिक्षा में नवीनता लाने के साथ-साथ समाज में हो रहे परिवर्तनों के आधार पर पाठ्यक्रमों में भी परिवर्तन लाना अनिवार्य है।

वर्तमान शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम शिक्षकों को एक ऐसी व्यवस्था में समायोजित करने के लिए प्रशिक्षण देता है जिसमें शिक्षा के बारे में यह समझाया जाता है कि उसमें केवल सूचनाओं का प्रसार होता है प्रचलित शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में ना तो नए विचारों को संदर्भ में लिया जाता है न ही स्कूल और समाज से जुड़े मुद्दों की इसमें चर्चा हो पाती है इसमें नए प्रकार के शैक्षणिक अनुभवों के लिए कोई स्थान नहीं होता है।

शिक्षक शिक्षा कार्यक्रमों में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण के विकास के साथ साथ अनुसंधान की आवश्यकता का भी ध्यान रखा जाना चाहिए।

आत्मसम्मान आत्मविश्वास सहयोग एवं सक्रिय सामाजिक व्यवहार को बनाए रखने के लिए शिक्षकों के दायित्व को स्पष्ट कर, गौरव की भावना का विकास किया जाना चाहिए।

सरकार व समाज द्वारा शिक्षक शिक्षा कार्यक्रम को सुदृढ़ बनाने के लिए सक्रिय भागीदारी का निर्वाह करना चाहिए।

शिक्षक शिक्षा से आर्थिक अनुदान के बदले प्रशिक्षण में ढील की व्यवस्था को समाप्त कर शैक्षिक अनुसंधान और नवीन खोजों के लिए सरकार व समाज द्वारा शिक्षक शिक्षा को सम्मानित किया जाना चाहिए।

शिक्षकों की वर्तमान समाज में आर्थिक व सामाजिक रूप से दयनीय स्थिति को सुधारने की व्यवस्था की जानी चाहिए जिससे शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त करने के इच्छुक नव युवाओं को इस व्यवसाय को अपनाने की प्रेरणा मिले।

निष्कर्ष

शिक्षक शिक्षा की वर्तमान स्थिति को सुधारने के लिए प्रशिक्षण प्रक्रिया इस प्रकार तैयार की जानी चाहिए जिससे की प्रशिक्षण में गतिरोध पैदा करने वाले कारकों को दूर किया जा सके। शिक्षक शिक्षा के पीछड़ते स्वरूप को सुधारने के लिए सरकार के साथ-साथ समाज का सहयोग भी अपेक्षित है। प्रशिक्षण काल में प्रशिक्षणार्थियों के सर्वांगीण विकास पर ध्यान दिया जाए। शिक्षक शिक्षा को मात्र सैद्धांतिक नहीं बल्कि व्यावहारिक भी बनाया जाना चाहिए इसे रुचिकर बनाने के लिए शिक्षण के अन्य स्वरूपों का भी प्रयोग किया जाना चाहिए जैसे नाट्य भूमिका निर्वाह सामूहिक चर्चा स्वतंत्र संवाद नवीन सुझावों को प्रोत्साहन आदि वास्तव में शिक्षक शिक्षा का वर्तमान प्रबंधन उच्च कोटि व गुणवत्ता का होना चाहिए। ❑

अध्यापक शिक्षा में गुणात्मक सुधार की चुनौतियाँ एवं समाधान

डॉ. मीनू अग्रवाल
पूर्व सहायक प्रोफेसर
श्री अग्रसेन स्नात्कोत्तर शिक्षा महाविद्यालय केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर (राज.)

किसी भी राष्ट्र की प्रतिष्ठा एवं उसकी उन्नति उसके नागरिकों के ज्ञान, कौशल, मानसिक क्षमता, चरित्र एवं संस्कारों पर निर्भर करती है। आज का बालक कल का नागरिक है इसलिए उन्हें इस प्रकार के उच्चतर गुणवत्तापूर्ण शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराए जाने चाहिए जिससे वे राष्ट्र के भविष्य को उज्ज्वल पथ पर अग्रसारित कर सकें। बालक रूपी पुष्प को पल्लवित करने के लिए एक गुणवान माली रूपी शिक्षक की आवश्यकता होती है जो पुष्प विशेष की आवश्यकता के अनुरूप उसकी देखभाल कर सके। शिक्षक प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से बालक के शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक विकास में महती भूमिका का निर्वहन करते हैं। परन्तु वर्तमान में शिक्षक का स्वरूप केवल सूचनादाता के रूप में सिमट कर रह गया है। आज प्रशिक्षण लेने के बाद भी वह अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन नहीं कर पा रहा है। प्राचीन गुरु जैसे द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, शुक्राचार्य, सन्दीपनी आदि ने शिक्षण के लिए कोई विशेष प्रशिक्षण नहीं लिया था; परन्तु वे फिर भी श्रेष्ठ शिक्षक कहलाए। ऐसे में प्रशिक्षण प्रक्रिया पर प्रश्न चिन्ह लगना स्वाभाविक है। अतः शिक्षक प्रशिक्षण की खामियों को पहचान कर दूर करना आवश्यक है।

वर्तमान समय में व्यक्ति सबसे अधिक मानसिक समस्याओं से व्यथित है। संयुक्त परिवारों के विघटन, अकेलापन, परस्पर अविश्वास, स्वयं से उच्च अपेक्षाएँ, पद विशेष की अभिलाषा के लिए मानसिक दवाब आदि ऐसे कारण हैं जिनसे तनाव एवं अवसाद की समस्याएँ बढ़ी हैं। यही नहीं विडियो गेम्स, फेसबुक एवं इन्टाग्राम पर सुन्दर दिखने की लालसा एवं असफलता का भय आदि के कारण भी अवसाद बढ़ रहा है। जिसका परिणाम बढ़ती हुई आत्महत्या की प्रवृति है। भारत जैसे युवाओं के देश में यदि इस प्रवृत्ति पर नियंत्रण नहीं किया गया तो आने वाले समय में स्थिति अत्यधिक भयावह होगी। ऐसी स्थिति का सामना करने के लिए आवश्यक है कि विद्यार्थी जीवन में ही माइण्डफुलनेस, स्वजागरूकता, मेडीटेशन, योग आदि सिखाया जाए। शास्त्र कहते हैं कि पुरुष क्रतुमय है। अतएव यत्क्रतुर्भवति तत्कर्म कुरूते, यत्कर्म कुरूते तदभिनिष्पद्यते। पुरुष जैसा संकल्प करने लगता है वैसा ही कर्म करता है, जैसा कर्म करता है वैसा ही बन जाता है। संसार की सारी विभूतियाँ एकमात्र मन को जीतने से ही प्राप्त की जा सकती हैं। अतः मनोमय शरीर के विकास पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। परन्तु विद्यार्थी इन सबसे अनभिज्ञ है; क्योंकि उसे अपने विद्यार्थी जीवन में इस प्रकार की कोई शिक्षा नहीं मिलती है। स्वयं अध्यापक भी अनभिज्ञ है। शिक्षकों का निर्माता शिक्षक प्रशिक्षक स्वयं तनाव एवं हीनभावना से ग्रस्त है।

शिक्षा एवं विषय विशेष दोनों में स्नातकोत्तर की उपाधी लेने के बाद भी उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं है। अन्य व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के महाविद्यालयों में प्रवेश का आधार विद्यार्थी की पूर्व शैक्षिक स्तर की प्रतिशत या प्रवेश परीक्षा में मेरिट होता है। कुछ महाविद्यालय ऐसे होते हैं जहाँ प्रवेश लेना हर विद्यार्थी का सपना होता है; क्योंकि वहाँ का स्टॉफ, व्यवस्था, पुस्तकालय, लैब आदि उच्चस्तरीय होती हैं तथा वहाँ से अच्छे प्लेसमेंट के अवसर भी मिलते हैं।

ऐसे में उसके लिए अपने विद्यार्थियों की समस्याओं को समझना और उसका समाधान करना कठिन है। वह स्वयं कई पूर्वाग्रहों से ग्रसित है। निर्देशनपरामर्श एवं व्यावहारिक मनोविज्ञान की पर्याप्त जानकारी के अभाव में उचित मार्गदर्शन प्रदान करना संभव नहीं हो पाता है।

शिक्षा एवं विषय विशेष दोनों में स्नातकोत्तर की उपाधी लेने के बाद भी उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा नहीं है। अन्य व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के महाविद्यालयों में प्रवेश का आधार विद्यार्थी की पूर्व शैक्षिक स्तर की प्रतिशत या प्रवेश परीक्षा में मेरिट होता है। कुछ महाविद्यालय ऐसे होते हैं जहाँ प्रवेश लेना हर विद्यार्थी का सपना होता है; क्योंकि वहाँ का स्टॉफ, व्यवस्था, पुस्तकालय, लैब आदि उच्चस्तरीय होती हैं तथा वहाँ से अच्छे प्लेसमेंट के अवसर भी मिलते हैं। जबकि शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों के लिए यह मान्य नहीं है। यहाँ सामान्यतया निजी एवं सरकारी क्षेत्र के वेतनमानों में अत्यधिक अन्तर होने के कारण विद्यार्थी केवल सरकारी नौकरी ही चाहता है। जबकि विद्यालय एवं शिक्षक प्रशिक्षण संस्थान दोनों की ही संख्या निजी क्षेत्र में अधिक है। अर्थ प्रधान समाज होने के कारण निजी क्षेत्र में कार्यरत शिक्षक योग्यता रखते हुए भी हीनभावना, तनाव या अवसादग्रस्त रहता है। पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति न हो पाने के कारण अंशकालिक कार्यों में संलग्न होने का प्रयास करता है। परिणामस्वरूप शिक्षण कार्य के प्रति अपनी जवाबदेही का निर्वहन नहीं कर पाता। वहीं दूसरी ओर ऐसे शिक्षक भी हैं जो अपनी रचनात्मक एवं सृजनात्मक कार्यशैली का पूर्ण निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ निर्वहन करते हैं; परन्तु निजी क्षेत्र में किसी भी प्रकार का प्रोत्साहन न मिलने के कारण वे भी हतोत्साहित हो जाते हैं। सामान्यतया निजी क्षेत्रों में योग्यता को प्राथमिकता नहीं दी जाती। अत: निजी एवं सरकारी क्षेत्र के अन्तर को समाप्त किए जाने की आवश्यकता है। साथ ही पूरे देश में शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों के लिए एक सामान्य प्रवेश परीक्षा की आवश्यकता है जिसका प्रावधान नई शिक्षा नीति में किया गया है। इसी प्रकार विशेष मानकों के आधार पर उच्चस्तरीय शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों को चिन्हित किया जाना चाहिए।

शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों में बी.एड. एवं एम.एड. के पाठ्यक्रमों की विषयवस्तु समय के साथ परिवर्तन चाहती है। एक ओर जहाँ हम विद्यार्थियों में भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव का भाव उत्पन्न करना चाहते हैं वहीं दूसरी ओर हमारी पुस्तकें पाश्चात्य दार्शनिकों, मनोविज्ञानिकों एवं शिक्षाविदों के ही उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। जिन्हें देखकर ऐसा लगता है कि मानो भारतीय इतिहास ज्ञानशून्य रहा हो। अत: पाठ्यपुस्तकों का लेखन करते समय भारतीयता का ध्यान रखना आवश्यक है। वर्तमान समाज में हो रहे परिवर्तनों एवं भविष्य की संभावनाओं के अनुरूप नवीन विषय वस्तु का समावेश आवश्यक है। उदाहरण के लिए कड़ी प्रतिस्पर्धा के दौर में निरन्तर अवसादग्रसित हो रहे विद्यार्थियों के प्रति समझ बढ़ाने की दृष्टि से मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धित विषयों का तथा डिजिटल युग में ब्लाग बनाना, यूट्यूब के लिए स्क्रिप्ट लिखना आदि तकनीकी विषयों का समावेश आवश्यक है। गतिविधि आधारित शिक्षण एवं विभिन्न शिक्षण विधियों से शिक्षण कराने के लिए आवश्यक है कि शिक्षक प्रशिक्षक उनका सैद्धान्तिक ज्ञान न देकर स्वयं उन्हीं विधियों का अपने शिक्षण में प्रयोग करें। उदाहरण के लिए बी.ए., बी.एड. या बी.एससी., बी. एड. में स्नातक के विषय जैसे राजनीति विज्ञान, अर्थशास्त्र, जीव विज्ञान आदि सामान्यतया व्याख्यान विधि से पढाया जाता है जबकि शिक्षक प्रशिक्षुओं को विभिन्न शिक्षण विधियों का प्रयोग करने के लिए कहा जाता है। यह विषयवस्तु को व्यावहारिक रूप से सीखने में कठिनाई उत्पन्न करता है। इसी प्रकार सिद्धान्त एवं व्यवहार में अन्तर इन्टर्नशिप के समय भी दिखता है। इन्टर्नशिप विद्यार्थियों को समस्त विद्यालयी गतिविधियों के सघन प्रशिक्षण के लिए निर्धारित की गई थी। परन्तु व्यावहारिक रूप में केवल कुछ औपचारिकताओं में सिमट कर रह गई है। अत: यहाँ मॉनिटरिंग की जानी आवश्यक है।

शिक्षण प्रशिक्षण संस्थानों में शिक्षण कौशलों के अतिरिक्त सॉफ्ट स्किल, लाइफ स्किल, करिअर स्किल एवं एम्प्लॉयबिलिटी स्किल्स आदि व्यावहारिक एवं अनिवार्य रूप से सिखाए जाने की आवश्यकता है। जिससे प्रशिक्षणार्थी अपने कार्यक्षेत्र में अपने विद्यार्थियों के साथ स्वयं उपयोग कर सकें एवं उन्हें भी जीवन में आगे बढ़ने और सफल होने के लिए सिखा सकें। भारत सबसे प्राचीन एवं गौरवमयी सभ्यताओं में से एक है। हम गुरुर्ब्रह्मा गुरुविष्णु: गुरुर्देवो महेश्वर:। गुरु: साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नम: कहते तो हैं; परन्तु मानते नहीं हैं। अत: हमें हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन करना होगा जिससे हम पुन: विश्व गुरु की पदवी पा सकें। ❑

Regional Institutes of Education : An Overview of Six Decades of Excellence

Prof. P. C. Agarwal
Principal
Regional Institute of Education NCERT, Bhubaneswar (Odisha)

Education was one of the most critical areas to be focused on and redefined as per our requirements after independence to realize national goals. Initially, the concentration was on higher education, and University Education Commission (1948-49) was set up in 1948 to sketch an overall roadmap for higher education. However, in the upcoming years, it was realized that the need was to overhaul the school education system. Therefore, a work plan was visualized in the form of Secondary Education Commission (SEC) in 1952. In 1953 SEC recommended the need to establish multipurpose schools with a variety of diversified courses/programmes to suit the different abilities and cater to the students' varying interests, aptitudes, and talents. The plan was to increase enrolment in secondary schools and link education of this stage to the needs of the country as had been endorsed by CABE in 1954.Thus, the initiative to open multipurpose schools or escalate existing schools as per the new norms began.

Meanwhile, to develop a holistic view of education in the country, the National Council of Educational Research & Training (NCERT) was establishedin 1961. The Ministry of Education merged seven institutions established after independence; namely, Central Institute of Education (1947), the Central Bureau of Textbook Research (1954), the Central Bureau of Educational and Vocational Guidance (1954), Directorate of Extension Programme for Secondary Education (1958) (erstwhile All India Council for Secondary Education, established in 1955), the National Institute of Basic Education (1956), the National Fundamental Education Centre (1956) and the National Institute of Audio-visual Education (1959) and thus, NCERT was formed and registered as a society under the Societies Registration Act (Act XXI of 1860) and started working as an autonomous body to assist and advise the Central and State Governments on policies and programmes for qualitative improvement in school education.

By the year 1961, the country realized the need for quality teaching resources to equip multipurpose schools.The Ministry of Education, Government of India, further decided to establish four Regional Colleges of Education in

the country to train teachers required for multipurpose and secondary schools. The Regional Colleges project was transferred to the NCERT. The work for the project was started in January 1962 by a team comprising officers of the Government of India and consultants from the Ohio State University under the United States Agency for International Development (USAID) in India. A number of national levels consultations were held with subject experts, educators, educational administrators, and officials of the prospective affiliating universities to finalize the plan and programme for the proposed colleges. Approximately one hundred acres of land were provided by the home states free of cost for these Colleges.

Model Institutes

One of the objectives of the NCERT was to establish and conduct Regional Colleges of Education in different parts of the country for the development of research, training and extension in general, and the development of multipurpose secondary education in particular. Four Regional Colleges of Education were established at Ajmer, Bhopal, Bhubaneswar and Mysore in 1963-64 to cater to the educational needs of the northern, western, eastern-north eastern and southern region respectively, along with adjoined multipurpose schools, popularly called the Demonstration Multipurpose Schools (DMS) as laboratory schools for teacher trainees and teacher educators.

The primary objectives of the Regional Colleges of Education were to develop and provide a programme of teacher education for the multipurpose schools and to prepare teachers of technical subjects, science, crafts, agriculture, commerce, home science and fine arts. It was also envisaged to extend its support to in-service courses for the existing teachers, supervisors and administrators for providing in-service programmes and field services for the teachers concerned with the multipurpose schools in the region in which it is located. One of the major initiatives was to organize and develop a model demonstration multipurpose school. In addition, extensive pilot studies and research projects were undertaken to analyze existing teaching strategies and develop innovative teaching strategies in relation to the multipurpose schools and the general secondary schools. These endeavours in turn, were used to improve patterns of teacher education and improve teacher education in all-purpose.

Quality has many parameters. RIEs reflect it in all its endeavours. Apart from smooth conduction of the courses mentioned above, regular revision of syllabus as per NCTE Regulations is also undertaken. RIEs are working as nodal centres in the region for the furtherance of policies and programmes in the region. Faculty contributes to all NCERT programmes and activities such as curricular studies, reforms and developments, textual material development, exemplar problem books, lab manuals, supplementary material development, development of learning outcomes, assessment tools, techniques, alternative academic calendar and PRAGYATA guidelines during the COVID-19 pandemic.

In 1982, a Task Force was set up by the Government of India under Dr. (Smt.) Madhuri Saha, the then UGC Chairperson to critically assess the role, organizational structure, and functions of NCERT. One of the important recommendations of the Task Force was to develop the Regional Colleges of Education into Regional Centres of NCERT. In June 1986, a committee was set up under the chairmanship of Dr. R. C. Das, to consider in detail the above named specific recommendation of converting RCEs into Regional Centres. The R. C. Das Committee submitted its report in January 1987; one of whose major recommendations was to “rename the Regional Colleges of Education into Regional Institutes of Education instead of Regional Centres as the Institutions will be conducting various pre-service and in-service teacher education courses leading to degree/diploma of a University”. The report was accordingly titled, Transformation of Regional Colleges of Education into Regional Institutes of Education of NCERT. This recommendation, however, was not implemented immediately. In the meantime, several significant developments took place in the domain of school education and teacher education. The implementation of the National Policy on Education 1986, the emergence of the National Council of Teacher Education as a Statutory Body in 1993 (which was previously functioning as a wing within NCERT), and the centrally sponsored District Primary Education Programme (DPEP) in 1994, to mention a few. Accordingly, some changes were envisaged in the functioning of NCERT and its constituent units. As a result, the Regional Colleges of Education

were renamed Regional Institutes of Education with effect from 18th April 1995. A new RIE for North Eastern Region, namely NERIE, Shillong, came into existence.

The five RIEs have been providing academic (in-service and pre-service teacher education, programmes) & technical support to the following states and UTs. RIE Ajmer covered the states of Haryana, Himachal Pradesh, Punjab, Rajasthan, Uttarakhand, Uttar Pradesh and the UTs of the NCT of Delhi and Chandigarh, Jammu & Kashmir and Ladakh. RIE Bhopal extended to the states of Chhattisgarh, Goa, Gujarat, Madhya Pradesh and Maharashtra and UT of Dadra and Nagar Haveli and Daman and Diu.RIE Bhubaneswar had in its jurisdiction the states Bihar, Jharkhand, Odisha and West Bengal and UT of A&N Islands for in-service and pre-service teacher education programmes and also for the northeastern states for pre-service teacher education programmes except B.Ed. programme which is being conducted by NERIE, Shillong for the last few years. RIE Mysore had the states of Andhra Pradesh, Karnataka, Kerala,Telangana and Tamil Nadu and UTs of Lakshadweep and Pondicherry as its region.NERIE Shillong stretched to the states of Arunachal Pradesh, Assam, Manipur, Meghalaya, Mizoram, Nagaland, Sikkim and Tripura.

Wings and Functioning

RIEs are governed by norms/regulations of NCERT, NCTE and UGC. RIEs have four academic departments-Department of Education in Science and Mathematics (DESM), Department of Education in Social Science and Humanities (DESSH), Department of Education (DE) and Department of Extension Education (DEE). Principal, Dean of Instructions, Dean of Research and Head of the Departments are academic, administrative functionaries who see to the day to day smooth functioning of the institutes.NERIE has almost 25 sanctioned faculty strengths. Each of the remaining four RIEs has sanctioned faculty strength of 56 with expertise in science subjects and Mathematics, social science subjects and languages (including state languages of the region concerned), different areas of education, extension education and physical education.

Each RIE has a well-functioning Studio and contributes to e-content development for PM e-Vidya and MOOCs. E-content is also developed on regional art and culture, unsung heroes and other historical and contemporary areas that needs to be highlighted and focused by the different regions.RIEs are residential in nature with all quality infrastructure facilities such as auditorium, seminar/conference rooms, playgrounds, library and laboratories, gyms, yoga centres, dispensary, bank, post-office, guest house(s), resource rooms, herbal garden theme parks within its campus.

The admission in undergraduate and post graduate programmes is given through the All India Entrance Examination known as Common Entrance Examination, conducted all across the country. In this exam, teaching aptitude, language efficiency and reasoning are tested while marks of qualifying exam are given 40 per cent weightage. The seats are distributed state wise as per quota and category as per Government of India norms. All SC/ST students and 50% of the remaining students who are hostellers are given a scholarship by NCERT, excluding those who have secured scholarships from other sources.

Innovative/Academic Programmes

RCEs undertook four years integrated teacher education programmes for preparing teachers of science and technology. One-year teacher education programme in agriculture, commerce, fine arts, home science, science and technology was also started. Programme for in-service education and three types of programmes for craft teachers: a one-year diploma programme, a two-year diploma programme, and a three-year degree programme were also made available. The programmes at different colleges were also based upon the needs of the respective regions.

Though the RCEs started with the various programmes envisioned in the document, they got modified in due course of time. A summer cum-Correspondence course for B. Ed. degree was started in 1966 in all the RCEs. It was done to clear the backlog of untrained teachers in secondary schools, which ran for several years. In order to produce competent teachers for higher secondary classes, two-year M. Sc. Ed. course was started at RCE, Mysore in physics, chemistry, and mathematics, and at RCE, Bhubaneswar in life sciences. One-year M. Ed. course was started in all RCEs.NERIE Shillong is presently undertaking B.Ed. programme, while other RIEs are undertaking four years, integrated B.Sc.B.Ed. (1964 onwards), B.A.B.Ed., two-year B.Ed. (1995 onwards) and M.Ed. and integrated M.Sc. Ed. programmes.

One of the pivotal programs is the Integrated Teacher Education Programs of 4 years (B. A. B. Ed and B. Sc. B .Ed) that has been a part of RIE since their inception. The integrated courses became path-breakers due to their professionalism as a vital ingredient in preparing teachers for secondary schools. The aim of the courses was amalgamation of theory and practice not as two separate activities but as a single continuing process. Later, with the entry of ICT in the arena of teaching-learning, technology was embedded and technological, pedagogical, and content knowledge-based teaching became the basis of imparting the courses. Further, foundation courses, pedagogy content and professional courses are integrated into the four-year sequence. Teaching starts with philosophical and psychological bases in the initial years and terminates with the formation of vision and identification of self in the final year. The fieldwork is framed to move from school exposure, where the students are familiar with various school functioning and observation of teachers in classes, to multicultural placement. In multicultural placement, the students are placed in three types of schools. Four days are spent in each type of school for gaining exposure before the one semester internship and a 10 days programme of working with the communityis conducted after the internship.

In the multicultural exposure, the students get to teach in classes as well as in substitute classes in schools of various types and mediums. The workout enhances a student's ability and efficiency to adapt to different schools and classroom situations. School exposure and Multicultural placements are the first footsteps where the students learn to become a part of the diversity of Indian classrooms and realize the requirements for an effective teacher to contribute to the school functioning. India represents a diverse and multicultural society. Therefore, it is essential than ever for teachers to incorporate culturally responsive instruction in the classroom. Students from various religion, race and ethnicity, economic strata, gender identity, and language backgrounds with different special needs create a diverse classroom. The classroom environment is essential for fostering cultural awareness, and its integration in actual lesson plans ensures it. Demonstrating a genuine interest in learning about the cultural background of each student helps to establish trust and facilitate the formation of a bond with students so that they feel valued. The pre-service teacher, thus, is taught to inculcate references and analogies to other cultures in their lessons and assignments to help students from diverse backgrounds to connect the learnings with their daily life.

Following this, the students then gear themselves up for twenty weeks of internship in Jawahar Navoday Vidyalayas (JNVs). The residential setting of JNV is preferable for a complete makeover of a pre-service teacher. The internship is a rigorous one-semester workout where the teachers are trained in teaching-learning practices, strategies, and classroom management to become an integral part of the school process. The internship's residential nature helps them discover the nuances and adapt to them in their daily routines. The last field exposure is community work, which is undertaken after returning from the internship. The exposure makes the student link with the various social issues and helps them deal and learn from real-life situations.Working with the community is a great way to meet new people, especially when one is new to an area. Community exposure also strengthens ties to the community and broadens support networks, exposing pre-service teachers to people with common interests and neighbourhood resources. Each of the field exposure is preceded and succeeded by pre-conference and post-conferences. This is done for forming a relationship between realizing the objectives of the programme and reflecting on their experiences at the end of the programs. The nature of the courses of B. A. B. Ed and B.Sc. B. Ed was further enriched by the introduction of the Choice Based Credit System (CBCS) into the syllabus to enhance its multidisciplinary nature.

Stretching Itself

Quality has many parameters. RIEs reflect it in all its endeavours. Apart from smooth conduction of the courses mentioned above, regular revision of syllabus as per NCTE Regulations is also undertaken. RIEs are working as nodal centres in the region for the furtherance of policies and programmes in the region. Faculty contributes to all NCERT programmes and activities such as curricular studies, reforms and developments, textual material development, exemplar problem books, lab manuals, supplementary material development, development of learning outcomes, assessment tools, techniques, alternative academic calendar and PRAGYATA guidelines during the COVID-19 pandemic.

RIEs contribute equally in in-service teacher education programmes and hand-holding with States/UTs. Each RIE has nominated the faculty member(s) as state coordinator(s) for the states and UTs under their purview to sustain and strengthen networking and liasoning with state educational functionaries and institutes at the school level. State Coordination Committee (SCC) is constituted for each State/ UT. Meetings are held every year to assess academic needs and support required by RIE/NCERT in different school and teacher education areas regarding research, development, training, and extension activities. SCC is chaired by the school education secretary or principal secretary. Principal acts as member secretary and state coordinator as the coordinators of SCC. All state-level education functionaries attend it.

Programmes are formulated by faculty members on such needs assessed and collected from states and also for priority areas of the Ministry of Education and NCERT. These programmes are discussed and modified, approved or disapproved at three levels, first at the level of Institute Advisory Board, secondly the recommended programmes are approved in the Management Committee meeting and finally reviewed and then approved by Programme Advisory Committee of NCERT. In this manner, around forty programmes are organized every year.

The Regional Institutes also organize national/ international seminars/conferences on current issues. Thus, RIE supports preparing a pool of key resource persons, conducting research for policy perspective, and developing required curricular, textual, assessment, and supplementary material. Course material for certificate courses, online courses, handbooks, e-content and other teaching-learning materials are under continuous construction by the RIEs to meet requirements throughout the country.

Placement of students in schools and further studies in the institute of higher learning is done with rigour to pass on the legacy of RIE throughout India. The pre-service teachers will carry with them the quality inputs and impart them further in all their endeavours. Nationwide schools are invited for conducting the placement. Even during the pandemic, schools have been invited, and online interactions have been coordinated between schools and pre-service teachers to ensure placements.

In RIEs, except for NERIE, DM Schools have classes from Early Childhood Care and Education (ECCE) to XII with all streams. RIE, Bhubaneswar also runs M.Phil. course in Education and is Nodal Centre of Utkal University for Ph.D. course work in Education. RIE Bhubaneswar has more than 2000 students, including the strength of DM School. All RIEs run Diploma Course in Guidance and Counselling along with NIE. Manodarpan is another initiative of the ministry in which, through various platforms of Paricharcha and Sahyog, mental health-related issues are discussed, and online support is provided to students. The alumni of the DCGC courses act as counsellors.

Researches have been conducted on various challenges faced by teachers, innovative pedagogical strategies, policy research and skill development to highlight only a few. Block-level research projects in different regions of the country have been adopted, and interventions made to improve the teaching-learning process. Ichhawar in the West, Chilika in East, Bhoirymbong Block in North-East, Hurda in North and Hunsur in South have been adopted. Besides, one block in Tripura has also been taken up, funded by the state government.

Based on the objectives of the formation of RIE itself, Inter RIE students' meet (RISM) and Inter DMS Students' meet are organized every year for cultural exchange (literary competitions and cultural programmes) and sports events.

As stalwarts in the field of Education, RIEs should be envisaged as national universities/ institutes that facilitate multidisciplinary teaching-learning and act as the nodal centre that can provide quality research in teaching-learning in all levels of education. RIEs should be opened and extended in each state and upscaled as National Institute of Education. RIEs are affiliated with local State Universities and therefore have a long-pending demand to declare NCERT/RIEs as Institute of National Importance. The restructuring and strengthening would enable the RIEs to achieve autonomy and design new innovative academic programmes as per national, regional and local requirement. The RIEs in all their endeavours already meet most of the expectations of NEP 2020; the achievement of this particular milestone will render the RIEs as a centre of multicultural composite education, and under their able leadership they can lead India to new heights. ❑

Challenges to Teacher Education in Changed Scenario of Covid-19 Pandemic

Rakesh Singh
Associate Professor
in Chemistry
Govt. Degree College,
Kathua (J&K)

India is a multilingual, multicultural society. So educational needs of different regions may be different. Govt. of India has framed Education policies from time to time keeping in view the aspirations of all people belonging to different regions of India. The latest in the series is National Education Policy 2020. The new policy envisages to transform the education system by 2030. Education is dynamic . With every passing year new discoveries are being made in different fields of Education. So a teacher has to keep himself updated as the flow of information is very fast. Teachers performance is focal point in the changing Scenario of education. No doubt, now a days there are vast resources available from where the student can collect the information but the role of teacher in society can't be underestimated. With the changing scenario arising due to Covid-19 Pandemic, the teachers responsibilities towards students have increased and the teachers also need to be upgraded as per needs of students and changing scenario. Before, February 2020, very few teachers were using online mode for teaching purpose and only few of them were aware of the various online modes of communication with students. But after March 2020, with shut down of all educational institutions , the focus of teaching community shifted towards the online mode of communication with students. Various reputed institutions of our country including Human Resource Development Centres of MHRD started exploring the best tools which can be used to effectively communicate with students. These institutions organized workshops to familiarize the teachers about the various online modes of teaching like Moodle, Zoom, Google Classroom , Wise App etc.

Despite all this, still the teachers working in different colleges and schools of India need a lot of guidance and support. Even, if tomorrow, the educational Institutions get opened, we have to shift towards blended mode of teaching. It is not about the teachers only which need to be trained and equipped with new modes of teaching , the students also needs to be trained and mentally prepared for this. Challenges are many and we can't sit idle. The

big private institutions with better resources at their disposal are using better paid software and Apps like Code Tantra, Meet, Zoom etc for communication with students. Though, some of these apps and software have free version available , but these free versions come with limited time, and features. No doubt, there are large number of Govt. institutions, and it is not easy for Govt. of the day to carry out all this in short span of time. But beginning needs to be done and those Govt. institutions which has resources available at their disposal should be asked to go ahead with these paid institutional software so that teachers are able to effectively communicate with the students. Besides this, training programmes needs to be organized at institutional/ Block level to train the teachers so they can effectively use these software and their features for benefit of students. Not only this, the students also need proper orientation.

One of the important drawbacks of online coaching which teachers have encountered is non availability of mobile with students. This is because, many of students who live in rural areas or belong to poor background, due to which they are unable to purchase smartphones. Hence, the Govt as well as the institutions have to think over it and a strategy has to be devised so that every student is able to take benefit of online coaching. Govt. of India has already taken big initiatives and launched MOOC (massive open online course) and has tried to reach out to student community and learners who can't attend regular classes. Covid-19 pandemic may go with passage of time but the importance of online coaching in the new changed environment can't be ruled out. So, all teachers should try to transform themselves as per new needs and changed environment. Govt. of India has already initiated a process of going from offline mode of teaching to blended mode of teaching. No doubt, the Covid-19 pandemic has posed a great challenge to the Educationist, but at the same time it has come to us with blessing in disguise, as it is during this phase of Covid-19 pandemic, the teachers started exploring new ways of communication to reach out to their students.

One of the important drawbacks of online coaching which teachers have encountered is non availability of mobile with students. This is because, many of students who live in rural areas or belong to poor background, due to which they are unable to purchase smartphones. Hence, the Govt as well as the institutions have to think over it and a strategy has to be devised so that every student is able to take benefit of online coaching.

The teachers started communicating first with WhatsApp, then Google Classroom and slowly shifted to more effective modes of communication like Moodle, Zoom, Google Meet etc. Besides this, it is also during this phase many teachers started preparing e-Content, Video Lectures and even launched their free YouTube Channels, which proved highly beneficial to the students.

No doubt, many teachers transformed themselves as per situation , but still lot needs to be done. Teachers will have to adopt new, innovative techniques for transaction of curriculum. The teacher education programme needs to be modified to equip the teachers for the different roles and functions forced due to changing environment and due to introduction of new technologies. Teachers shall have to develop critical thinking ability and inculcate the same in their students. Let teachers transform themselves for the betterment of our students in general and society as whole. We, the teachers will have to accept the challenges imposed by changing environment, and should try our best to acquaint ourselves. The teachers can take help of videos available on YouTube and learn a lot about the new technologies used for online teaching . As teachers, we have to transform as per situation. Only a teacher who is the best learner can be the best teacher. ❑

The importance of teachers in society can't be underestimated. They take on the responsibility of shaping young minds and change their lives for the better. Teachers are one of the biggest role models for students. They inspire them to push themselves to accomplish their goals.

The Teacher is the backbone of the society

Dr. Mukhtyar Singh Saini
Associate Professor
G.G.M.Sc.College Jammu
Jammu Kashmir (UT)

The teacher's place in society is of sparkling reputation. He acts as the center for the transmission of intellectual traditions and technical skills from generation to generation and helps to keep the lamp of civilization burning. As per Dr.Abdul Kalam (Former President of India) "Learning needs freedom to think and freedom to imagine, and both have to be facilitated by the teacher"

Since education is not just limited to books, Kalam believed that a teacher should be able to make a human being who is powered by knowledge and learning. "Teaching is a noble profession that shapes the character, caliber, and future of an individual.If he is nationalistic and devoted to the national cause and appreciates his responsibility, he can produce a competition of patriotic men and women who would thoroughly place the country above the community gain.These simple lines describe the role of a teacher in society. The role of a teacher in society is both important and treasured.Teachers are the backbone of any country, the pillar upon which all aspirations are converted into realities. It has a far-reaching impact on the society he lives in and no other personality can have an inspiration more reflective than that of a teacher. In addition to these characteristics, the role of a teacher is to attain-skill and morals and stand by their moral code and that of their institute, while keeping a promise to discretion between students, colleagues, and the public. Teaching is the one profession that creates all other professions.No man can be a good teacher unless he has feelings of warm affection toward his pupils and a genuine desire to impart to them what he believes.Teachers teach because they care. Teaching young people is what they do best. It requires long hours, patience, and care. In a completely rational society, the best of us would be teachers and the rest of us would have to settle for something else.

The importance of teachers in society can't be underestimated. They take on the responsibility of shaping young minds and change their lives for the better. Teachers are one of the biggest role models for students. They inspire them to push themselves to accomplish their goals. The most important part of teaching is to teach what it is to know. Teaching is the greatest act of optimism. The art of teaching is the art of assisting discovery. Teaching is the everlasting end and office of all things. The environment changes day by day and there is no uncertainty that the fashionable society is not

the same as the ancient one. The education system has changed totally. Nowadays being a teacher does not mean only being an assistant in the problematic process of getting education; it means being an inspired and highly talented "leader", which escorts a student in all ways of studying. Are these dissimilarities positive or negative? In my view, present-day teachers should pay more attention to new approaches to teaching, which will make studying more entertaining. Organized with the changes, new opportunities appeared towards our institutions. Nowadays institutions need to teach their learners how to gain information and how to select and use that. This happens so swiftly that students learn how to use the Internet together with their teachers. Although they are still considered to be a kind of front runner in the class, they can be thought of as organizers in the learning process. They are supporters rather than educators and also mentors to parents.

If we stress the teaching process, we still understand that there are a great number of deviations in this pitch as well, and all of them have an impact on the role of teachers. First of all, teachers in contemporary classrooms are no longer lecturers, they are facilitators, their main task is to set areas and shape the learning process consequently. Then, in the past, teachers used to follow a syllabus that was compulsory for them. Nowadays, teachers have a Countrywide Curriculum, a Core Curriculum, and a local curriculum that they have to consider, but on the other hand, they have liberation to choose the teaching materials to type up a syllabus of their own and teach their scholars so that they can accomplish well both at examinations and in life. Another alteration between the past and present tasks of teachers is signified by the methodological background they need to be talented to use and switchefficiently (computer, Laptop,PowerPoint presentation, projectors, etc). In its place of teaching chalk appearance, they need to be an information technology expert. One of the biggest tasks for teachers is that their role in the institution administration has also transformed. The school needs them as personalities, who can make decisions and manage the stress of the changing environment of institutions.

The key question is how these deviations present themselves for the civilization, for the participants (teachers, learners, parents) of education. Students are extremelyvaluable by the teacher's love and affection, his attractiveness, his capability, and his ethical pledge. A popular teacher becomes picture-perfect for his students. The students try to follow their teacher in his conduct, getups, protocol, way of discussion and wear. He is their model. The young generations today are facing a world in which communication and info revolution has led to changes in all domains as scientific, technological, political, economic, social, and cultural.

To be able to prepare our beginning people to face the future with self-assurance purpose and accountability, the vital role of teachers cannot be overstressed. Education is essential for representatives, entrepreneurs, entertainers, agriculturalists, spiritual groups, scholars, etc. for their respective professional growth. Some of the great teachers were the cause of political and industrial revolutions worldwide. Their knowledge helped several societies to gain self-sufficiency and economic freedom. The role of a teacher is to shape the concentrations of the younger generation. That shaping will be on the confident line, growth of scientific and human-centeredsuperiority, and temper and self-discipline. The author likes to conclude this article by writing a few quotations. "A teacher affects eternity; he can never tell where his influence stops. A teacher's life lights many lamps""ShikshakSe Shiksha, Shiksha Se Samaj, SamajSe Rashtra"❑

Will both the degree holders be considered at par when it comes to appointing an individual who has done B.Sc. B.Ed. integrated course and the other who has done B.Ed. later on after degree? If we treat them differently then on what basis and if we treat them equal then what about one extra year of investment by the student who does B.Ed. later on after Bachelor degree?

Integrated Teacher Education Programme : Some Reflections

Prof. R. G. Kothari
Former Vice Chancellor, Veer Narmad South Gujarat University and Former Dean, Surat

National Curriculum Framework (2014) recommended changes at structural and functional level and thus we moved from one year Bachelor of Education to two years bringing in lots of changes at structural and functional level and also implementing the curriculum to make the would be teachers effective not only at theoretical aspects but equally competent at the application level as well. In the recent past the Ministry of Human Resource Development has recommended to move toward Integrated Teacher Education Programme and recommended to began with integrated B.Sc. B.Ed. and B.A. B.Ed. Programmes. The same in voiced out in National Education Policy (2020) and further it is thought to be implemented across the nation by 2030.

The authors being in the field since long and experienced and witnessed both the system of offering teacher education may it be Bachelor of Education of one year or Master to Education of one year or moving to two years of B.Ed. and two years of M.Ed. to B.Sc. B.Ed. and M.Sc. M.Ed. to B.A. B.Ed. and M.A. M.Ed. or witnessing integrated programmes like B.Ed. M.Ed. have many questions which are bothering them since long. The authors feel that the questions needs to be responded at first in order to evolve out with a better system of providing programme in teacher education.

The first and a million dollar question is why are we so very different in opinion when it comes to education as a discipline? Are we able to establish the fact that education is a discipline? Followed by a pool of questions like

What difference are we going to offer to a student who will be doing B.Sc. B.Ed. or B.A. B.Ed. course as compared to student pursuing B.Ed. after completion of B.Sc. or B.A.?

What is that different input which we are going to offer to these would be teachers as compared to present 2 year Bachelor of Education, which will make them a better teacher as compared to their fellow mates?

How will be the student who pursues B.Sc. B.Ed./ B.A. B.Ed. course different from the one who does his Bachelor in Education after his basic disciplinary degree?

Will both the degree holders be considered at par when it comes to appointing an individual who has done B.Sc. B.Ed. integrated course and the other who has done B.Ed. later on after degree? If we treat them differently then on what basis and if we treat them equal then what about one extra year of investment by the student who does B.Ed. later on after Bachelor degree?

What pedagogical practices or andragogical practices will be incorporated to four year integrated teacher education programme?

What do we mean by integration ?

Integration of subject with edu-

cation that is integration at horizontal level or vertical level or both and how will that be possible?

OR Integration of education and disciplinary subject done together if so how should it be done? Is it possible?

Actually speaking all the subjects taught should be integrated and interrelated with each other rather we learn each of them separately and that too in a very compartmentalized manner. We learn each subject in a watertight compartmentalized manner as if none of the subjects are inter-related with each other. Can we not integrate one subject with other to understand the essence of integration or is it that no subject has got any relevance with other subject. Are we able to relate Psychological theory while teaching other subjects? Are we able to implement what we learn in one subject to teach other subject? Are we using the real theory of transfer of learning? Are we able to integrate stimulus response? Are we able to understand how Eriksons 8 stage theory helps in teaching and learning? Are we able to apply SR or RS theory? Are we able to relate the theory which we learn that is cognitive development or any other theory?

Further more we are also offering B.Ed. M.Ed. and B.Sc. B.Ed. Special Education and B.A. B.Ed. Special Education Programme. When we look at the curriculum to be transacted more or less it is all the content which the student pursuing B.Ed. first and then M.Ed. that is fetching one degree after completion of the first being put together when it comes to student pursuing integrated programme of B.Ed.M.Ed. so what is the sense of putting syllabus of both degrees into one and offering B.Ed. M.Ed.? Is it just saving of one year which is the focus?

Also when discussed with expert in the field of special education and the institute offering B.Sc. B.Ed. Special Education and B.A. B.Ed. Special Education it is found that the syllabus for special education is prescribed by Rehabilitation Council of India and there cannot be any changes done in it. Thus majority of the institutions offering B.Sc. B.Ed. Special Education and B.A. B.Ed. Special Education are mixing the course content of both the programmes in one and providing these two programmes. Is this real integration? Furthermore, it is also found that the students pursuing B.Sc. B.Ed. in a particular subject may it be Physics, Chemistry, Life Sciences-Botany or Zoology and the one pursuing B.Sc. B.Ed. special Education with Physics, Chemistry, Life Sciences-Botany or Zoology are made to sit in the same class for the component of pure subjects of science. The components of Special Education are taught to them separately. Here the authors feel that real essence of integration and inclusion, which is one of the components of special education, is killed when the programme itself is taught in this manner of exclusion and their needs to be a serious attention paid to it.

The authors strongly recommend that Four year Integrated Teacher Education Programme needs following clarification before its implementation

When we say one year B.Ed. is not comprehensive enough then will 4 year integrated programme be comprehensive? and if so then

What does integration really mean and what will integration involve?

At present B.Ed. or M.Ed. which is of two years and four semesters consists of about 80 to 100 credits (20 to 25 credits per semester), Is it possible in four year integrated course to give proper justice to both the components may it be science and humanities ?

If 50 students are admitted in four year integrated programme, so what should be distribution of methodology of teaching courses means how many should be allowed to opt for mathematics, Physics, Chemistry, Biology and so on if any more subjects offered then what should be the distribution based on?

If 12 students are admitted per subject then we can offer only 4 methodology of teaching which is great limitation. Similar issue will be faced by students with arts stream.

Who will teach B.Sc. courses? Teacher educator or subject specialist. Though the recommendation is that teacher educator should be handling both but again a question which arises is are all teacher educators possessing knowledge to give proper justice to the same?

If any employer wants to employ teachers at PGT level then Maters Degree in the subject is a must so then are we giving scope to candidate pursuing B.Sc. B.Ed. or B.A. B.Ed. to be a TGT? What about teachers for senior/higher secondary section?

Recommendations:

The student who has completed B.Sc. B.Ed. Programme with any of the subject specialisation should be allowed to progress to higher secondary school by taking up a bridge course to make him more competent enough to teach at higher secondary level while in-service.

A student who completed D.El. Ed. And if he/she has Bachelor degree and Master Degree during his/her job he/she must be allowed to go for B. El. Ed. Courses and he/she must get exemption in few course. He/she must be allowed to earn few more credits as per requirement of B. El. Ed. In the similar way a student with B. El. Ed. wants to elevate himself/herself for B.Ed. (teacher in IX, X, XI and XII) he/she must be permitted to earn few required credits. ❑

भारतीय संस्कृति में प्रश्नों की परम्परा

डॉ. ईश्वर परिड़ा
सहायक प्राध्यापक
इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
हरियाणा केंद्रीय विश्वविद्यालय

'प्रश्न' एक ऐसा शब्द है जो हर व्यक्ति के दैनिक जीवन में पाया जाता है। अधिकांशत: इस शब्द का उपयोग किसी भी व्यक्ति द्वारा सूचना प्राप्त करने हेतु किया जाता है। चाहे व्यक्ति हो या समाज इन सभी के विवाद के केंद्रबिंदु में प्रश्न ही होता है। प्रश्न न किसी व्यक्ति, न समाज या समय से घिरा हुआ है। प्रश्न की परम्परा मनुष्य के आविर्भाव से लेकर आज तक चली आ रही है। पूरी मानव सभ्यता में प्रश्न का महत्त्व नि:संदेह रूप से विद्यमान है। लेकिन भारतीय संस्कृति में प्रश्न की परम्परा के बारे में सही रूप से जानने के लिए यह लेख लिखना आवश्यक हो गया है।

भारत की संस्कृति समय के साथ-साथ बदलती चली आ रही है। इसलिए प्रश्न के क्षेत्र में भी बदलाव होना आवश्यक है। भारत जैसी महान संस्कृति में प्रश्नों की गुणवत्ता और स्पष्टता हेतु यहाँ पर बहुत सारे गहरे और अर्थपूर्ण ग्रंथों की सुदूर अतीत में संयोजित रचनाएँ हुई थी। इसके फलस्वरूप वेद, उपनिषद, आरण्यक, ब्राह्मण, इतिहास, पुराण, स्मृति एवं इस प्रकार की अनेक ज्ञान की शाखाओं का निर्माण हुआ है।

प्राचीन भारत के ग्रंथों में ज्ञान की चर्चा एक साधारण बात थी। परन्तु ब्रह्मांड की सृष्टि, सृष्टि के कर्ता, मनुष्य का आविर्भाव तथा मृत्यु के उपरांत जीवों के अस्तित्व को लेकर जो अन्वेषण या खोज हुई थी वो आज की 21वीं शताब्दी के धर्म और विज्ञान के माध्यम से भी रहस्य बनी हुई है। सृष्टि के निर्माण को लेकर सिर्फ भारत ही क्यों बल्कि विश्व की दूसरी संस्कृतियों में ढेर सारी और भी अवधारणाएँ प्रचलित हैं। अगर ब्रह्मांड की सृष्टि के बारे में मनुष्य के मन में प्रश्नों के अंकुर नहीं फूटते तो फिर विश्व में इतने सारे धर्मों और ज्ञान की शाखाओं का होना संभव नहीं होता।

सभ्यताओं के निर्माण एवं उसकी प्रगति के साथ-साथ मानव के प्रश्न पूछने और सोचने की स्वतंत्रता पर पाबन्दी या प्रतिबन्ध बढ़ता चला गया। हम अतीत में क्यों जाएँ, आज की 21वीं शताब्दी के भारतीय जीवन में प्रश्न पूछना, प्रश्न सोचना क्या बिना किसी रूकावट के हो सकता है? इसका उत्तर इस लेख को पढ़ने वाले लोग अनुभव कर सकते हैं। मानव आज की सभ्यता की बनावटी आड़ में रहकर प्रश्नों की स्वतंत्रता को भाषा और भावों के बंधन में सीमित करते चला जा रहा है अपितु आज मानव बात करने की शैली और लिखने की कला जानते हुए भी भविष्य के आनुमानिक कुफल के भय से प्रश्नों के सीमित व्यवहार को अंजाम दे रहा है।

प्रश्न पूछने की व्यावहारिकता को वर्तमान समय में भारतीय शिक्षा व्यवस्था में छात्र-छात्राओं से दूर रखा जा रहा है। आज समाज में बच्चों को यह बताया जाता है कि वरिष्ठ और उच्च पद पर स्थित लोगों से प्रश्न न पूछना शालीनता और सम्मान देने का माध्यम है। इसलिए विद्यार्थियों के अंदर रचनात्मक और सृजनात्मक सोच की धारा घट रही है। इसके फलस्वरूप मानव समाज की प्रगति में यह बाधा उत्पन्न कर रहा है।

औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था के उत्तराधिकारी के रूप में आज की भारतीय शिक्षा हमारे छात्र-छात्राओं में मानसिक रूप से गुलामी की प्रवृत्ति बढ़ाने के साथ-साथ मौलिक सोच में गिरावट लाने का कार्य कर रही है। अगर कुछ चयनित प्रश्नों का निर्धारित तरिकों से उत्तर लिखना किसी भी परीक्षा का उद्देश्य है तो हम बिना दुविधा से यह कह सकते हैं कि आज औपनिवेशिक शिक्षा नीति भारत में सफल है। हालांकि निर्धारित पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तक हेतु विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के छात्र और छात्राएँ फँसे हुए हैं। इसलिए आज की पारंपरिक परीक्षा प्रणाली सृजनात्मकता को कहाँ तक बढ़ावा देती है, यह सोचने वाला विषय है। आज सारे शिक्षा-अनुष्ठान चक्रीय रूप से सूचना देने के केंद्र बन गए हैं। परन्तु सोचने वाला विषय यह है कि भारत में ऐसे कितने शिक्षा अनुष्ठान हैं जो नई खोज के लिए सही माहौल बनाते हैं।

केवल पाश्चात्य ही नहीं बल्कि हमारे भारतीय विद्वानों ने भी हमारे छात्र-छात्राओं को प्राचीन भारतीय संस्कृति में प्रश्नों की परम्परा के विषय में बताने की चेष्टा नहीं की, इसलिए जब से भारत में औपनिवेशिक शिक्षा व्यवस्था लागू हुई तब से इसका परम लक्ष्य आज्ञाकारी प्रजा का निर्माण करना था। भारतीय छात्र-छात्राओं में प्रश्नोत्तरी, पठन शैली माध्यम से निजी चिंतन का विकास हो यह बात पाश्चात्य और भारतीय शिक्षाविदों के प्रयास में पाया नहीं जाता। जिससे आज की शिक्षा व्यवस्था ने अंधा धुंध 'पाश्चात्य' को मानते हुए औपनिवेशिक सोच को हासिल किया है। हमारे यहाँ शिक्षा अनुष्ठान प्रस्तावित पाठ्यपुस्तकों के तहत पढ़ना, रटना, लिखना और प्रमाण पत्र प्रदान करने तक सीमित रह गए हैं। जिससे विद्यार्थियों में प्रश्न पूछने की क्षमता दिन-पर-दिन घटती जा रही है। घर में अभिभावक और घर के बाहर शिक्षकों ने महाभारत में वर्णित आरुणि और उपमन्य जैसे शिष्यों की सराहना करते हैं; क्योंकि इन दोनों ने गुरुओं के आदेश का बिना प्रश्न पूछे पालन किया था। अतएव भारतीय संस्कृति में ऐसे उदाहरण विद्यार्थियों को प्रश्न पूछने और स्वचिंतन की परिकल्पना करने के नजदीक भी भटकने नहीं देते।

जब से मानव ने बोलना और बात करना सीखा है और भाषा का गठन किया है तब से प्रश्न उसके दैनिक जीवन का एक महत्त्वपूर्ण भाग बन गया है। प्रश्न का यह महत्त्व आज भी मानव समाज में अलग-2 रूप में देखने को मिलता है। अति प्राचीन काल से सृष्टि के निर्माण के कारण और उससे जुड़े समस्त प्रश्न मानव के मन को सोचने के लिए मजबूर करते रहे हैं। भारत में सबसे पुराने संग्रहीत किये गए ज्ञान के रूप में वेदों को अपनाया गया है। वेदों में सबसे प्राचीन वेद ऋग्वेद है जिसके नासदीय सूक्त में सृष्टि के कारण और उससे जुड़े समस्त ज्ञान पर संदेहात्मक प्रश्न पूछे गए हैं। नासदीय सूक्त के दशम मंडल में इस तरह बहुत सारे संदेहात्मक प्रश्नों का मिलना भारतीय संस्कृति में प्रश्नों की भूमिका का उचित प्रकार से वर्णन करता है। वैदिक ज्ञान भंडार का और एक अंग है उपनिषद। उपनिषदों में प्रश्नों की उपस्थिति को दार्शनिक दृष्टिकोण से समझा जा सकता है। कुछ चयनित उपनिषदों में प्रश्नों की महत्ता किस तरह से थी यह नीचे विशेष रूप से बताया जा रहा है।

प्राचीन भारत के ग्रंथों में ज्ञान की चर्चा एक साधारण बात थी। परन्तु ब्रह्मांड की सृष्टि, सृष्टि के कर्ता, मनुष्य का आविर्भाव तथा मृत्यु के उपरांत जीवों के अस्तित्व को लेकर जो अन्वेषण या खोज हुई थी वो आज की 21वीं शताब्दी के धर्म और विज्ञान के माध्यम से भी रहस्य बनी हुई है। सृष्टि के निर्माण को लेकर सिर्फ भारत ही क्यों बल्कि विश्व की दूसरी संस्कृतियों में ढेर सारी और भी अवधारणाएँ प्रचलित हैं। अगर ब्रह्मांड की सृष्टि के बारे में मनुष्य के मन में प्रश्नों के अंकुर नहीं फूटते तो फिर विश्व में इतने सारे धर्मों और ज्ञान की शाखाओं का होना संभव नहीं होता।

मुण्डक उपनिषद में शौनक नामक व्यक्ति ने अग्निरस ऋषि से ये प्रश्न पूछे थे, 'ऐसा कौन-सा ज्ञान प्राप्त करने से हमें बाकी समस्त ज्ञान के बारे में ज्ञात हो सकता है?, सारे ज्ञानों के मूल स्रोत को जानने के लिए क्या करना पड़ेगा?' इसके आलावा बृहदारण्यक उपनिषद में मैत्री नामक एक महिला ने अपने पति ऋषि याज्ञवल्क्य से यह प्रश्न पूछा था, 'अमरत्व प्राप्ति के लिए क्या करना पड़ेगा?' केन उपनिषद की शुरुआत भी एक प्रश्न से होती है और प्रश्न यह था, 'क्या मानव के मन को जाग्रत करवाता है?, मन का आधार क्या है?, मन कौन है?, मन का मन कौन है?, हमारी इन्द्रियाँ हमारे मन को कैसे जाग्रत करवाती हैं?' इसी तरह से अनेक प्रश्न उपनिषदों के गंभीर दार्शनिक तत्व के बारे में हमें परिचित करवाते हैं। कथा उपनिषद में हमें एक ऐसी घटना देखने को मिलती है जिसमें यमराज बालक नचिकेता को तीन वरदान मांगने का अवसर देते हैं। बालक नचिकेता तीसरे वरदान के रूप में यमराज से धन तथा यश की कामना नहीं करता अपितु एक प्रश्न पूछता है वो प्रश्न यह था, 'मृत्यु के उपरांत व्यक्ति किस अवस्था में पहुँचता है। कुछ कहते हैं कि उसका अस्तित्व बना रहता है; और कुछ कहते हैं कि उसका अस्तित्व समाप्त हो जाता है।' एक बालक द्वारा यमराज को इस तरह के गंभीर प्रश्न और

प्रकृति के रहस्य को सुलझाने का प्रयास काश आज के भारतीय समाज के अभिभावक और शिक्षकों को समझ में आ पाता।

प्रश्नों से भरपूर एक ऐसा उपनिषद जिस उपनिषद का नाम ही प्रश्न उपनिषद है, उसमें प्राचीन भारत में हमें प्रश्नों की परम्परा साफ़-साफ़ दिखती है। इस उपनिषद का हर एक अध्याय एक प्रश्न के माध्यम से शुरू होता है। इसमें कबंधी नमक एक शिष्य ने ऋषि पिप्पाल्दा से यह प्रश्न पूछे थे, 'कहाँ से इतने प्रकार के जीवों का जन्म हुआ है?, जीवन की सृष्टि किस तरह से हुई है?, सजीवता किसे कहते हैं?, मनुष्य की प्रवृत्ति क्या है और वह किस तरह से बनी?, मानव का अर्थ हम क्या समझते हैं?, ध्यान का अर्थ हम क्या समझते हैं और हम ध्यान क्यों करेंगे?, मनुष्य के अंदर अविनाशी तत्व क्या है?' इस तरह से प्रश्नों की एक शृंखला हमें प्रश्न उपनिषद में देखने को मिलती है।

उत्तर वैदिक काल में प्रश्नों का उपयोग और प्रश्नों की भूमिका इतनी भी कम नहीं थी। इस काल खंड में महाभारत जैसे ग्रंथों की रचना की गई और इस ग्रन्थ की शुरुआत ही प्रश्न-उत्तर की रीति से की गई है। इस ग्रन्थ का 'भगवत गीता' एक महत्त्वपूर्ण भाग है जिसका पहला श्लोक ही प्रश्न की पुष्टि करता है, '**धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः। मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय॥**' इस श्लोक में हस्तिनापुर के सम्राट यह पूछ रहे हैं कि 'हे संजय कुरुक्षेत्र में उपस्थित पांडवों और कौरवों की सेना क्या कर रही है?' इसके साथ सम्राट सेना की स्थिति के बारे में भी पूछ रहें हैं। सम्पूर्ण 'भगवत गीता' अनेक प्रश्नों-उत्तरों के वार्तालाप से भरपूर है। इसमें अर्जुन ने श्री कृष्ण की वाणी को यथावत ग्रहण ही नहीं किया है बल्कि वह संदेहपूर्ण ढँग से श्री कृष्ण से गहराई के साथ प्रश्न भी पूछता है। यद्यपि दूसरे धर्मों में भक्त द्वारा भगवान को प्रश्न पूछने की परम्परा ना के बराबर देखने को मिलती है। 'भगवत गीता' में प्रश्नों का एक अद्भुत समाहार भारतीय संस्कृति में इसकी महानता को दर्शाता है।

केवल वैदिक ही नहीं अपितु बौद्ध संस्कृति में भी प्रश्नों का महत्त्व बहुत अधिक है। बौद्ध ग्रन्थ के सुत्त निपात में वादशील और वितंड जैसे शब्दों का व्यवहार प्रश्नों की महत्ता को दर्शाता है। सुत्तपिटक के अंगुत्तर निकाय में पन्हा सुत्ता में गौतम बुद्ध ने प्रश्नों के प्रकार और उसके उत्तर देने की कला कौशल के बारे में शिक्षा दी है। बुद्ध पूरे प्रश्नों को चार भागों में बाँटते हैं। जैसे 'कुछ प्रश्न ऐसे पूछे जाते हैं जिनके उत्तर हाँ या ना और यह या वह में दिए जाते हैं, कुछ प्रश्नों के उत्तर उच्चारण किये गए शब्दों के शाब्दिक और मार्मिक अर्थ के माध्यम से दिए जाते हैं, कुछ प्रश्नों के उत्तर प्रति प्रश्न के माध्यम से दिए जाते हैं, कुछ प्रश्नों के उत्तर नहीं देना और मौन रहना उचित होता है।' इससे पता चलता है की बौद्ध संस्कृति में प्रश्नों का महत्व कितना अधिक था।

इस तरह से हम देख सकते हैं कि वैदिक या बौद्ध ग्रंथों में प्रश्नों की उपस्थिति कितनी महत्त्वपूर्ण थी। परन्तु ऐतिहासिक दृष्टिकोण से प्रमाण के रूप में अशोक के स्तंभ लेख पर प्रश्नों में प्रामाणिकता अच्छे ढंग से परिलक्षित होती है। अशोक के प्रमुख स्तंभ लेख संख्या 2 में यह उल्लेख हुआ है कि 'धम्म साधु कियमसु धम्मेती; बहुकयाने, दया, दाने, सासे, सोकाय' प्राकृत भाषा में लिखे गए इस स्तंभ लेख में यह कहा गया है कि धर्म उत्तम है; परन्तु धर्म का अर्थ क्या है? धर्म का अर्थ है थोड़ा सा दोष और अधिक अच्छाई- दया, दान, सत्य और शुद्धता। हमें यहाँ यह सब बताने की आवश्यकता इसलिए पड़ी क्योंकि प्रश्नों की महत्ता अशोक के समय में भारत की संस्कृति में कितनी अधिक थी जिसका प्रमाण हमारे सामने है।

उत्तर मौर्य काल में एक और बौद्ध ग्रन्थ की रचना हुई थी जिसका नाम है 'राजा मिलिन्द के प्रश्न' पाली भाषा में इस ग्रन्थ को 'मिलिन्दपन्हो' कहते हैं और अंग्रेजी में इस पुस्तक के अनुवाद को 'The Questions of King Milind' कहा जाता है। इस ग्रन्थ में इण्डोग्रीक राजा मिलिन्द के साथ बौद्ध संन्यासी नागसेन के साथ प्रश्न-उत्तर माध्यम से वार्तालाप हुआ था। इसमें राजा मिलिन्द नागसेन से बौद्ध धर्म के बारे में अनेक प्रश्न पूछते हैं। जिनका उत्तर नागसेन संतोषजनक रूप से प्रस्तुत करते हैं। राजा मिलिन्द बौद्ध धर्म के बारे में नागसेन से उत्तर पाकर इतने प्रभावित हो गए थे कि उन्होंने सिंहासन त्यागकर शेष जीवन बौद्ध संन्यासी बनकर